सीमित वितरण हेतु प्रकाशित

देखी सुनी

वर्ष 2015, अंक 32

" हमारे जीवन का उस दिन अंत होना शुरू जाता है जिस दिन हम उन मुददों के बारे में चुप हो जाते हैं जो आम समाज के लिए मायने रखते हैं " मार्टिन लूथर किंग जूनियर

प्रिय साथियों!

लैंगिक भेदभाव व हिंसा के विरूद्व महिला आंदोलन के निरंतर संघर्ष, चुनौतियों व उपलब्धियों को समर्पित हमारा यह अंक समायोजन है– स्त्री हिंसा, सुरक्षा, स्वास्थ्य व मूलभूत सुविधाओं के मुददों और नितियों– स्वच्छ भारत, आदर्श ग्रामयोजना इत्यादि में महिलाओं की भागीदारी पर। आशा है 12 पन्नों में समेटे ये आंकलन, आंकड़े, नज़रिये व पहलू आपके कार्यों में जागरूकता लाने वाली सहयोगी संदर्भ सामग्री साबित होगी।

अपने मुल्यवान अनुभव, प्रतिक्रियाये व सुझाव हमसे ई–मेल या पत्र के माध्यम से अवश्य साझा करें।

नीतू रौतेला
जागोरी संदर्भ समूह

छात्राओं के हक में फैसला

मुद्दा

जाहिद खान

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय की मौलाना आजाद सेंट्रल लाइब्रेरी में महिला कॉलेज की छात्राएं भीं अब बिना किसी रोक-टोक के अध्ययन के लिए जा पाएंगी। इलाहाबाद हाई कोर्ट ने हाल में एक जनहित याचिका का निस्तारण करते हुए विश्वविद्यालय को इस बाबत निर्देश दिए कि लाइब्रेरी में छात्राओं को प्रवेश की अनुमति दी जाए। अदालत ने कहा कि लिंग के आधार पर छात्रों के बीच भेदभाव असंवैधानिक है। छात्राओं को पुस्तकालय में प्रवेश की अनुमति न देना महिला स्वतंत्रता के मूल अधिकारों का हनन है। यही नहीं, अदालत ने कुलपति के उस बयान को भी असंवैधानिक बताया, जिसमें उन्होंने कहा था कि लड़कियों के पुस्तकालय जाने से लड़कों की भीड़ चार गुना बढ़ जाएगी, जिससे लाइब्रेरी का अनुशासन खत्म हो सकता है। मुख्य न्यायाधीश डीवाई चंद्रचूड़ और न्यायमूर्ति पीकेएस बघेल की खंडपीठ ने स्पष्ट किया कि शारीरिक संरचना के कारण महिलाओं पर खतरा अधिक है। लिहाजा विश्वविद्यालय, छात्राओं की सुरक्षा के दायित्व बोध से स्वयं को अलग नहीं कर सकता।

अदालत का फैसला सही है। पुस्तकालय में छात्राओं के प्रवेश पर पाबंदी विश्वविद्यालय का एकतरफा निर्णय था और हर लिहाज से संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का उल्लंघन। जब मामला प्रकाश में आया, तो इसकी हर तरफ तीखी आलोचना हुई। केन्द्रीय मानव संसाधन मंत्री ने विश्वविद्यालय प्रबंधन से इस पूरे मामले की विस्तृत रिपोर्ट मंत्रालय को सौंपने का निर्देश दिया। इस बीच एक विधि इंटर्न तथा मानवाधिकार कार्यकर्ता ने अमुवि की छात्राओं के प्रति इस भेदभाव भरे फैसले के खिलाफ इलाहाबाद हाईकोर्ट में जनहित याचिका दायर कर दी जिसका फैसला छात्राओं के हक में आया है। मामले की सुनवाई के दौरान विश्वविद्यालय के अधिकारियों ने हलफनामे के जरिए अदालत को आश्वासन दिया कि वे सुनिश्चित करेंगे कि परिसर में आइंदा लैंगिक भेदभाव न हो और छात्राओं की सुरक्षा सुनिश्चित हो।

गौरतलब है कि मौलाना आजाद सेंट्रल लाइब्रेरी में अध्ययन करने की छात्राओं की यह लोकतांत्रिक मांग कॉलेज बरसों से ठुकराता आ रहा था। कभी लड़कियों की हिफाजत व बुरी संगत से बचाने के नाम पर तो कभी अनुशासन या जगह की तंगी के नाम पर। यानी, प्रबंधन की मानें तो लाइब्रेरी का अनुशासन इसलिए बरकरार है कि वहां लड़कियां के प्रवेश पर पाबंदी है। ज्यों ही वे लाइब्रेरी जाएंगी, लाइब्रेरी का अनुशासन खतरे में पड़ जाएगा। दरअसल यह वह मर्दवादी सोच है जो आज भी लड़कियों को, लड़कों के बिगाड़ने का जिम्मेदार मानती है। वह पुरुष ग्रंथि जो मानती है कि लड़कियों की हिफाजत सिर्फ उसके जिम्मे है। वह सामंती सोच, जो सोचती है कि लड़कियां यदि लड़कों के संपर्क में आईं तो बिगड़ जाएंगी। गोया, महिलाओं को बचाने का सारा ठेका पुरुषों के सिर है। फिर चाहे ऐसे अतिवादी कदम, महिलाओं की तरक्की व उन्हें मिले संविधान प्रदत्त समानता के अधिकारों के विरोधी ही क्यों न हो।

संविधान का अनुच्छेद 15 साफ-साफ कहता है कि महिला-पुरुष दोनों को समानाधिकार मिलेंगे और राज्य लिंग

के आधार पर उनमें कोई भेद नहीं करेगा। शिक्षा व संवैधानिक अधिकार सभी के लिए बराबर होंगे। लेकिन व्यवहार में इस अधिकार की खुले आम अवहेलना होती है और यह अवहेलना उन्हीं के द्वारा होती है, जिनकी जिम्मेदारी इसके संरक्षण की है। विश्वविद्यालय, जो ज्ञानार्जन का केन्द्र हैं, जहां छात्र-छात्राएं एक साथ शिक्षा और जीवनमूल्यों को ग्रहण करते हैं, वहां लड़का-लड़की के आधार पर उनमें आपस में फर्क करना अफसोसनाक है। अलीगढ़ विश्वविद्यालय प्रबंधन ने अपनी सेंट्रल लाइब्रेरी के संबंध में जो व्यवस्था की थी, उसे किसी भी लिहाज से सही नहीं ठहराया जा सकता। विश्वविद्यालय प्रबंधन अपने फैसले के हक में चाहे जो दलीलें दे, मगर यह व्यवस्था सीधे-सीधे महिला विरोधी है। लाइब्रेरी में छात्राओं के प्रवेश पर पाबंदी जहां उनके बौद्धिक विकास में बाधा पहुंचाना है, वहीं उनके संवैधानिक अधिकारों पर भी हमला है। यह गैर संवैधानिक व्यवस्था यूनीवर्सिटी में आज से नहीं, बल्कि मौलाना आजाद पुस्तकालय की स्थापना के समय से ही जारी थी। फिर भी इसके खिलाफ कोई पहल नहीं हो पाती थी।

बीते एक दशक में इस गैर कानूनी पाबंदी के खिलाफ जमकर आवाज उठी, लेकिन यह आवाज अनसुनी रही। 2010 में महिला कॉलेज की 600 छात्राओं के साथ 57 प्रोफेसरों ने इस संबंध में हस्ताक्षरयुक्त ज्ञापन तत्कालीन कुलपति को सौंपा था जिसमें मांग थी कि विश्वविद्यालय से संबंद्ध दीगर कॉलेज के छात्रों की तरह महिला कॉलेज की छात्राओं को भी केन्द्रीय लाइब्रेरी में जाने की छूट मिले। ज्ञापन सौंपे चार साल से ज्यादा बीत गए, लेकिन उस पर कोई कार्यवाही नहीं हुई। विश्वविद्यालय प्रबंधन इस मुद्दे पर हठधर्मी छोड़ने के लिए तैयार नहीं था। वह अपनी तरफ से नहीं चाहता था कि विश्वविद्यालय की सामंती अकादमिक संस्कृति में फेरबदल हो। सच पूछें तो छात्राओं से जुड़ा यही मामला नहीं, बल्कि जब भी अमुवि में कोई लोकतांत्रिक पहल की आवाज उठती है, जिससे यहां के सामंती मूल्यों को कोई चोट पहुंचने की आशंका हो, इस्लाम या इस्लामिक संस्कृति पर 'खतरे' का शोर मचाकर उसको दबा दिया जाता है। विश्वविद्यालय का माहौल आज भी यदि कई मामलों में अलोकतांत्रिक और असंवैधानिक है, तो इसमें एक वर्ग के निहित स्वार्थ हैं, जो नहीं चाहता कि यहां कोई बदलाव हो। क्योंकि, यदि कोई बड़ा बदलाव हुआ, तो विश्वविद्यालय पर उनका एकाधिकार खत्म हो जाएगा।

इक्कीसवीं सदी में जब महिलाएं चांद पर झंडा बुलंद कर रही हैं और उनके फतह के दायरे में कुछ भी नहीं बचा है, तब यह बात सुनने में अजीब लगती है कि भारत में एक विश्वविद्यालय ऐसा भी है, जहां छात्राओं के साथ उनके लिंग के आधार पर भेदभाव किया जाता है। लड़का और लड़की में भेद करने वाली इस तरह की व्यवस्थाएं, इसलिए और भी ज्यादा खटकती हैं कि देश में आज ऐसा कोई क्षेत्र बाकी नहीं, जहां महिलाओं ने अपने काम का लोहा न मनवाया हो। सत्ता के अहम केन्द्रों से लेकर बैंक, शासकीय एवं अशासकीय कंपनियों और बड़े व्यापारिक घरानों तक में आज महिलाएं उच्च पदों पर काबिज हैं। महिलाओं ने अपने शानदार काम से साबित किया है कि वे किसी भी मामले में पुरुषों से कमतर नहीं फिर भी उनके साथ भेदभाव का बर्ताव इसका परिचायक है कि तमाम संवैधानिक उपबंधों और कानूनों के बाद भी समाज अपनी पुरुषप्रधान मानसिकता बदलने को तैयार नहीं। जाहिर है, जब तक यह मानसिकता नहीं बदलेगी, समाज में कोई बड़ा बदलाव नहीं आएगा।

राष्ट्रीय सहारा 03.12.2014

महज मुद्दा

आधी आबादी

संजीव चंदन

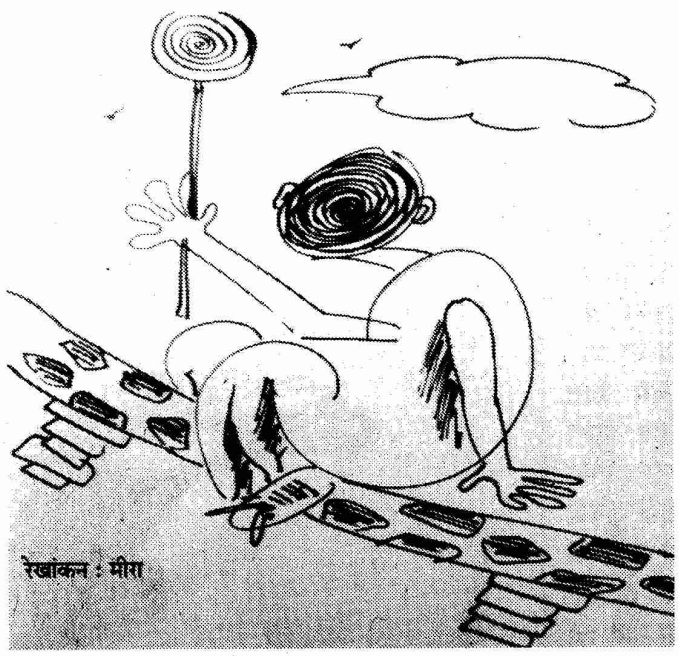

यों तो भारत में महिला आंदोलन की पृष्ठभूमि बनाई थी महिलाओं की स्थिति को लेकर 1974 में प्रकाशित 'समानता की ओर' रिपोर्ट ने, लेकिन इसे देशव्यापी गति मिली थी महाराष्ट्र की एक आदिवासी लड़की 'मथुरा' जब पुलिस थाने में अपने ऊपर किए गए बलात्कार का मुकदमा सुप्रीम कोर्ट से हार गई। पिछले दिनों मथुरा से मिलने यह लेखक चंद्रपुर गया था। मथुरा की हालत देखकर आज संस्थानों में कैद हो गए महिला आंदोलन की मौजूदा हालात के कारण समझे जा सकते हैं। वैसे मथुरा से मिलने के कुछ ही दिनों बाद बोधगया के भूमि आंदोलन की जुझारू नेता मांजर देवी से मिलने के बाद कारणों का यह निष्कर्ष और पुख्ता होता गया।

महाराष्ट्र के चंद्रपुर जिले के नवरगांव में रहने वाली आदिवासी महिला मथुरा वह पीड़िता थी, जो भारत में बलात्कार के कानून में बदलाव के लिए हुए पहले आंदोलन का कारण बनी। इस मुकदमे के अस्सी के दशक में में महिलाओं के खिलाफ यौन हिंसा के विरोध में और महिलाओं के पक्ष में सम्मानजनक कानून बनवाने के लिए देशव्यापी आंदोलन हुए और 1983 में भारत सरकार बलात्कार संबंधी कानून को लेकर महिलाओं के पक्ष में एक कदम और आगे बढ़ी। 1983 में कानून में बदलाव के बाद भारतीय दंड संहिता में बलात्कार की धारा 376 में चार उपधाराएं ए, बी ,सी और डी जोड़कर हिरासत में बलात्कार के लिए सजा का प्रावधान किया गया। बलात्कार पीड़िता से 'बर्डन ऑफ प्रूफ' हटाकर आरोपी पर डाला गया। यानी अपने ऊपर बलात्कार होने को सिद्ध करने के लिए पीड़िता को जिस जहालत और अपमान से गुजरना पड़ता था, उससे उसे मुक्ति मिली और अब आरोपी के ऊपर खुद को निर्दोष सिद्ध करने की जिम्मेवारी आ गई। भरी अदालत में अपमानजनक प्रक्रिया से गुजरना भी खत्म हुआ।

1972 में महाराष्ट्र के गढ़चिरोली जिंले के देसाईगंज थाने में अपने दोस्त अशोक के खिलाफ अपने भाई के द्वारा दर्ज मामले में बयान के लिए आई सोलह वर्ष की मथुरा मडावी के साथ थाने के दो पुलिस कांस्टेबलों- गणपत और तुकाराम ने थाना परिसर में ही बलात्कार किया था। भाई ने मथुरा के दोस्त पर उसे बहलाने और अपहरण करने की कोशिश का आरोप लगाया था। इस घटना के विरोध में स्थानीय लोगों के हंगामे के बाद थाने में केस तो दर्ज हुआ लेकिन 1974 में निचली अदालत ने दोनो आरोपियों को इस बिना पर छोड़ दिया कि मथुरा 'सेक्स की आदी' थी और उस पर चोट के कोई निशान नहीं थे और उसने विरोध या हंगामा नहीं किया था। बॉम्बे उच्च न्यायालय के नागपुर खंडपीठ ने निचली अदालत के निर्णय को इस आधार पर खारिज कर दिया कि थाना परिसर में कांस्टेबल के द्वारा डरा कर किया गया बलात्कार सहमति के साथ संबंध नहीं हो सकता। 1979 में सुप्रीम कोर्ट ने निचली अदालत के फैसले को फिर से बहाल कर दिया और आरोपियों को दोषमुक्त कर दिया।

इसके बाद देशव्यापी महिला-आंदोलन शुरू हुए और 1983 में भारत सरकार को बलात्कार कानून को और संवेदनशील बनाना पड़ा। मथुरा से मिलने, उसे खोजने का मन बना 2011 में चंद्रपुर, जहां मथुरा रहती है, के पड़ोसी जिले में आयोजित अखिल भारतीय स्त्री अध्ययन सम्मेलन में एक प्रहसन के बाद। इस में देश भर से महिला आंदोलनों से जुड़ी महिलाएं इकट्ठी हुई थीं। इनमें वे आंदोलनकारी भी थीं, जो मथुरा को मुद्दा बना कर लड़ी गई लड़ाई में शामिल थीं। इन सब में से किसी को मथुरा की सुध नहीं आई, पड़ोसी जिले में आकर भी कोई उससे मिलने की जहमत नहीं उठा सका। कोई चर्चा तक नहीं। हद तो तब हो गई, जब इस सम्मलेन ने एक ऐसे व्यक्ति को लैंगिक-संवेदना के लिए 'बोधि वृक्ष' का प्रतिरूप भेंट किया, जिसने आयोजन के चार महीने पहले ही देश की लेखिकाओं के लिए अश्लील उदगार व्यक्त किए थे और देश भर में महिलाओं ने उसका प्रतिवाद किया था, सड़कों पर उतरीं थीं।

सवर्ण और अभिजात्य नेतृत्व वाले महिला आंदोलन ने पीड़िताओं को मुद्दा भर समझा, खासकर तब, जब वे दलित या आदिवासी थीं। कौशल्या वैसंत्री अपनी आत्मकथा में लिखती हैं कि जब भी जाति उत्पीड़न के मुद्दे उठाये जाते थे तो आंदोलनकारियों का रुख नकारात्मक और नाक भौं सिकोड़ने वाला हुआ करता था। मथुरा अब करीब साठ साल की हो चली है। दो किशोर बच्चों की मां मथुरा अपने पति और बच्चों के साथ बदहाल स्थिति में रहती है। गढ़चिरौली की मथुरा अपने दोस्त अशोक के गुजर जाने के बाद चंद्रपुर के भगवान अत्राम से शादी कर नवरगांव में एक झोपड़ीनुमा घर में रहती है और गांव वालों के लिए 'मथुरा भगवान अत्राम' के नए जीवन में जी रही है। वह बकारियां चराती हैं और अपने पति और बच्चों के साथ खेत मजदूर के रूप में काम करती हैं। जब हम उसके घर पहुंचे तो वह खांस रही थी और बीमार थी। वह बात करने के लिए तैयार नहीं थी। उसके पति भगवान और उसने कहा कि अब हंगामा से क्या फायदा होगा । हमारी बदहाली का कोई इलाज है क्या !' उसका छोटा बेटा गुस्से से लाल घर में दाखिल हुआ। वह नहीं चाहता कि उसकी मां का तमाशा बने। मेरे साथ गई सत्यशोधक समाज की नूतन मालवी और मुझसे बात कर वह आश्वस्त हुआ। मथुरा ने बताया, ' मुझसे कभी कोई मिलने नहीं आया। शुरू में एक मंत्री आई थी. कोइ आता है और मेरा तमाशा बनाना चाहता है।मेरी गरीबी का कोइ नहीं सोचता। मुझे एक बाई पांच सौ रुपए देकर फोटो खींचना चाह रही थी, मैंने भगा दिया।' आक्रोश से भरे मथुरा और उसके पति ने कहा कि नागपुर की सीमा साखरे वर्षों पहले आई थी। सुप्रीम कोर्ट में निर्णय के बाद उससे मिलनेवाले स्वतंत्र पत्रकार सुरेश धोपटे कहते हैं, 'मैंने मथुरा से मिलकर उसकी कहानी लिखी, 'संडे मिड-डे' में छपी। लेकिन पत्रकारों और तत्कालीन सामाजिक कार्यकताओं का रुख काफी असंवेदनशील था।

महिला के विरुद्ध हिंसा के खिलाफ भारत में पहला फाउंडेशन बनाने वाली सीमा साखरे कहती हैं, 'मैं मथुरा से हमेशा मिलती हूं, पिछले दिनों चंद्रपुर में मिली थी। वह साठ की हो चली है और उम्र से अधिक बूढ़ी दिखती है, गरीबी के कारण। वह अब दादी भी बन गई है।' जबकि चंद्रपुर, मुंबई या दिल्ली आने-जाने के प्रति उदासीन मथुरा के दो किशोर बच्चे हैं, एक दसवीं फेल और एक आठवी के बाद पढाई छोड़ चुका है।

मथुरा जैसी ही बदहाल जिंदगी जी रही हैं मुसहर जाति की मांजर देवी। बिहार के बोध गया में सातवें और आठवें दशक में एक व्यापक आंदोलन हुआ था, जिसे 'बोध गया भूमिमुक्ति आंदोलन' के नाम से जाना जाता है। बोध गया के शंकर मठ के कब्जे से हजारों एकड़ जमीन मुक्त कराकर भूमिहीनों को देने की लड़ाई थी वह। जमीनों के पट्टे महिला आंदोलनकर्मियों ने भूमिहीन महिलाओं के नाम लिखवाने की पहल करवाई। मांजर देवी इस आंदोलन की स्थानीय जुझारू नेता थीं। आंदोलन का प्रभाव खत्म होते ही आसपास के दबंगों ने उस पर कहर बरपाना शुरू किया। उनके पूरे परिवार को फर्जी डकैती मामलों में फंसाया गया। आज मांजर देवी अपने गांव में बीमार और पस्तहाल हैं। इसका नेतृत्व जयप्रकाश आंदोलन के युवा संगठन 'संघर्षवाहिनी' ने किया था। इस आंदोलन से जुडी मध्यवर्गीय स्त्रियां आज या तो बड़े संस्थानों में हैं या किसी गैर सरकारी संगठन में। एक -दो को छोड़कर मांजर देवी से मिलने वाला कोई नहीं है , आज उन्हें इलाज की जरूरत है, लेकिन पैसे नहीं हैं।

सही है कि महिला आंदोलन के प्रयासों को एक सिरे से खारिज नहीं किया जा सकता , । लेकिन मथुरा की घटना और उसकी उपेक्षा से यह जरूर तय होता है कि गांवों में रहने वाली एक आदिवासी या दलित महिला उनके लिए सिर्फ मुद्दा भर होती है। घूमने के ही क्रम में एक और उदाहरण मिला। महाराष्ट्र के यवतमाल जिले में पचास से भी अधिक आदिवासी लड़कियां अविवाहित मां हैं। इन्हें उत्पीड़ित मानकर समाज के तथाकथित मुख्यधारा में लाने के लिए कुछ सामाजिक कार्यकर्ता सरकारी तंत्र से 'सुधार गृह' के मद में कोष स्वीकृत करवाने में लगे हैं, जबकि इन मांओं की वास्तविक स्थिति को सुधारने की कोई योजना किसी के पास नहीं है। ❑

themarginalised@gmail.com

जनसत्ता 09.11.2014

मनोरमा को कब मिलेगा इंसाफ

मणिपुर के ऐतिहासिक कांगला फोर्ट के सामने शहर की तीस अग्रणी महिलाओं द्वारा किया गया वह निर्वस्त्र प्रदर्शन आज कितने लोगों को याद है, जिन्होंने अपने हाथ में लिए बैनर पर लिखा था 'इंडियन आर्मी, रेप अस। उन दिनों समूचे मणिपुर में उठे उग्र जनांदोलन के चलते असम राइफल्स को कांगला फोर्ट से अपना मुख्यालय स्थानांतरित करना पड़ा था।

32 वर्षीय थांगजाम मनोरमा की बलात्कार एवं हत्या की जिस घटना ने उस जनाक्रोश को जन्म दिया था, उस मामले में पिछले दिनों एक जांच रिपोर्ट सर्वोच्च न्यायालय में पेश की गई। जांच आयोग ने इस मामले में असम राइफल्स पर गलत गिरफ्तारी, भयानक यातनाएं देने, बुनियादी प्रक्रियाओं एवं नियमों की अनदेखी के आरोप लगाए हैं। स्थानीय पुलिस को सूचित न करने या साथ में कोई महिला पुलिस अफसर न रखने के लिए आयोग ने असम राइफल्स के दोषी जवानों पर कार्रवाई का आदेश दिया है।

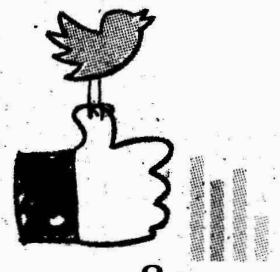

नजरिया

उस डॉक्टर को सख्त सजा मिले, जिसने रिकॉर्ड तोड़ने के लिए लापरवाही से नसबंदियां कीं।

तवलीन सिंह

उनके लिए दूसरे किस्म की।

असल में, उनकी आदतें हमने बिगाड़ी हैं। जब राजनेता और अधिकारी अपने इलाज के लिए विदेश जाया करते हैं, तब हम-आप उनका विरोध नहीं करते। किसी ने यह मालूम करने तक की जहमत भी नहीं उठाई है कि सोनिया गांधी हर दूसरे महीने किस देश में जाती हैं इलाज करवाने, और इस इलाज के पैसे कहां से आते हैं। हम तब भी चुप रहे, जब सरकार के अधिकारियों को विदेशों में इलाज करवाने की इजाजत दी पिछली मनमोहन सरकार ने। चुप रहे हम, जब हमारे शासकों ने इस बहाने से, कि गरीबों का इलाज मुफ्त होगा, निजी अस्पतालों के निर्माण के लिए महानगरों में कौड़ियों के दाम नगरपालिकाओं की जमीनें दीं। हालांकि ऐसा नहीं है कि हर बार हमारे शासकों को अब इलाज करवाने के लिए विदेश जाने की जरूरत है।

सिफारिश थी कि सैन्य बलों एवं वर्दी में रहनेवाले अधिकारियों द्वारा महिलाओं के साथ की जानेवाली यौन हिंसा को साधारण अपराध कानून के दायरे में लाना चाहिए। कमेटी ने आंतरिक संघर्षों में सशस्त्र बल विशेष अधिकार अधिनियम जैसे कानूनों की समीक्षा का प्रश्न भी उठाया था।

इस अधिनियम के तहत सरकार किसी क्षेत्र विशेष को अशांत क्षेत्र घोषित कर सकती है, अगर वह इस नतीजे तक पहुंचती है कि वह क्षेत्र या उसका एक हिस्सा ऐसी खतरनाक स्थिति में है कि नागरिक शासन की मदद के लिए फौजी बल का इस्तेमाल जरूरी है। अधिनियम की धारा चार के तहत कोई कमीशंड अफसर, वारंट अफसर या नॉन कमीशंड अफसर सार्वजनिक व्यवस्था बनाए रखने के लिए गोली भी चला सकता है। धारा छह बताती है कि इस अधिनियम के तहत काम कर रहे किसी भी व्यक्ति के खिलाफ कानूनी कार्रवाई केंद्र सरकार की अनुमति से ही मुमकिन है। अंदाजा लगाया जा सकता है कि साधारण नागरिकों को अपने ऊपर हुए अत्याचार की जांच शुरू करवाने के लिए केंद्र सरकार से गुहार लगाना कितना लंबा, खर्चीला और पीड़ादायी अनुभव होता होगा।

विगत आधी सदी से इस अधिनियम ने वहां के लाखों लोगों को आज भी अघोषित आपातकाल की स्थिति में रहने के लिए मजबूर किया है। मच्छेल प्रसंग के बाद क्या थांगजाम मनोरमा प्रसंग के बहाने मणिपुर ही नहीं, बल्कि सभी उपद्रवग्रस्त इलाकों में मानवाधिकारों की रक्षा के लिए नई जमीन तोड़ने की शुरुआत होगी?

अमर उजाला 25.11.2014

मंथन नसबंदी शिविर आयोजित करने के तरीके पर पुनर्विचार जरूरी, जन्म दर घटाने के अन्य उपाय भी आजमाने होंगे

बिलासपुर घटना से मिले सबक

छत्तीसगढ़ के बिलासपुर में नसबंदी ऑपरेशन के दौरान लापरवाही के कारण एक दर्जन से ज्यादा महिलाओं की मौत हो गई। खबरों के मुताबिक औजारों को ठीक से रोगाणुहीन नहीं किया गया था या दवाइयों में कुछ मिलावट के कारण महिलाओं को विषबाधा हुई। प्राथमिक जांच में दूसरा कारण सामने आ रहा है। इस घटना से परिवार नियोजन कार्यक्रम पर प्रश्न-चिह्न लग गया है, जो मीडिया के मुताबिक न तो पारदर्शी है, न चिकित्सकीय रूप से सुरक्षित और न इससे देश की आबादी को स्थिर करने में कोई बहुत बड़ी मदद मिल रही है। फिर हर नसबंदी ऑपरेशन पर डॉक्टरों व अधिकारियों को बोनस के भुगतान पर भी नैतिक सवाल उठाए गए हैं, क्योंकि इसमें जोर-जबर्दस्ती की गुंजाइश मौजूद है।

डॉ. मनोहर अगनानी
वरिष्ठ आईएएस अधिकारी
manoharagnani@gmail.com

दुनिया में भारत एकमात्र ऐसा देश है, जहां परिवार नियोजन के विभिन्न साधनों में महिला नसबंदी ज्यादा प्रचलन में है। पिछले साल देश में नसंबदी के 42 लाख ऑपरेशन हुए, जिनमें 98 फीसदी ट्यूबेकटोमी यानी महिला नसंबदी के थे। परिवार नियोजन के प्रयास खासतौर पर महिलाओं पर ही केंद्रित है, क्योंकि हमारे यहां पुरुषों में यह गलतफहमी है कि ऐसे ऑपरेशन से उनका पुरुषत्व प्रभावित होगा। यहां यह बताना प्रासंगिक होगा कि एमटीपी (मेडिकल टर्मीनेशन ऑफ प्रेग्नेंसी) एक्ट में संशोधन कर गर्भपात सेवाओं का विस्तार कर सरकार ने गर्भ निरोधक सेवाएं पहुंचाने और इनके उपयोग की सीमा स्वीकार कर ली है।

यही वजह है कि उसने गर्भपात सेवा का उपयोग आबादी नियंत्रण में करना शुरू कर दिया। परिवार नियोजन कार्यक्रम की रणनीति की समीक्षा में इन सारी चिंताओं पर गौर करने की जरूरत है। हालांकि, यह उचित होगा कि ऐसा महिलाओं के चयन और प्रजनन संबंधी अधिकारों की चौखट के भीतर किया जाए। इस प्रकार सरकार को चाहिए कि वह परिवार नियोजन संबंधी स्त्री-पुरुषों की जरूरत और यह सेवा उपलब्ध कराने वालों की क्षमता को ध्यान में रखकर बहुद्देश्यीय रुख अपनाए। इसके पहले कि परिवार नियोजन रणनीतियों संबंधी सुझाव दिया जाए, कुछ अन्य तथ्यों पर भी गंभीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है।

सबूत बताते हैं कि जल्दी विवाह (20 वर्ष से कम उम्र) और जल्दी-जल्दी गर्भधारण, माता और बच्चे दोनों के लिए जोखिम बढ़ा देते हैं, इसलिए जिन राज्यों में शिशु

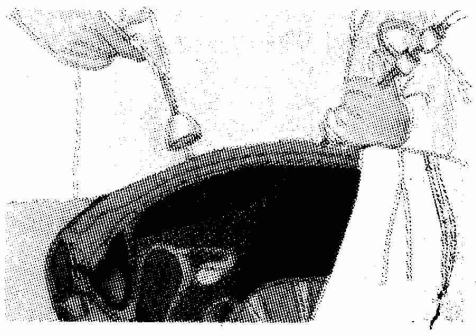

मृत्यु दर और प्रसूति के दौरान माता की मृत्यु की दर ऊंची हों, वहां ऊंची जन्म दर भी इसका एक कारण है। भारतीय महापंजीयक कार्यालय के मुताबिक मौजूदा सदी के पहली चौथाई यानी 2026 तक रिप्लेसमेंट लेवल की जन्म दर (प्रति महिला 2.1 बच्चे) हासिल कर ली जाएगी यानी देश की जरूरत के अनुसार जन्मदर हो जाएगी।

प्रजनन दर बताती है कि कुल प्रजनन दर में कमी 30 वर्ष और इससे ऊपर की आयु की महिलाओं में ही केंद्रित है। कुल प्रजनन दर (टीएफआर) में कमी 15 से 19 वर्ष आयु वर्ग में भी देखी गई है। इसकी एकमात्र वजह इस आयु वर्ग में विवाहितों के अनुपात में आई महत्वपूर्ण कमी है, क्योंकि गर्भनिरोधकों का उपयोग लगभग स्थिर है और आयु वर्ग में विवाहितों की प्रजनन दर में भी नगण्य गिरावट देखी गई है। ऊपर बताए गए तथ्यों और नीतिगत सिफारिशों में व्यक्त चिंताओं को ध्यान में रखते हुए परिवार कल्याण कार्यक्रम पर फिर से दृष्टि डालने की जरूरत है ताकि इसे लोकोन्मुख व संवेदनशील बनाया जा सकें, जिसके केंद्र में गुणवत्तापूर्ण सेवाएं हों।

विवाह की वैध आयु के पूर्व बाल विवाह को रोकना सबसे महत्वपूर्ण है। इस कानून का कड़ाई से पालन जरूरी है और जो लोग इसका उल्लंघन करते हैं उन्हें ऐसा दंड देना चाहिए, जो एक मिसाल बन जाए। फिर विवाह की आयु बढ़ाने संबंधी जागरूकता के लिए सघन कार्यक्रम चलाया जाना चाहिए ताकि पहले बच्चे के जन्म के समय माता की अधिक उम्र सुनिश्चित की जा सके। इसका फायदा हमें शिशु मृत्यु दर और मातृ मृत्यु दर में गिरावट के रूप में मिलेगा।

फिर युवा माताओं में बच्चों के बीच अंतर रखने की विधियों का उपयोग सुनिश्चित करना होगा। 18 से 24 वर्ष की अपेक्षतया कम उम्र में गर्भवती होने से रोकने के लिए इन विधियों का उपयोग बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि कुल प्रजनन दर में इसी आयु वर्ग की महिलाओं का सबसे अधिक योगदान होता है। विभिन्न सर्वेक्षणों से पता चला है कि 30 वर्ष से कम आयु की एक-चौथाई महिलाओं की परिवार नियोजन की जरूरतें पूरी नहीं हो पातीं, जिनमें से अधिकतर बच्चों में अंतराल रखने से संबंधित है, इसलिए यह इन सेवाओं की मांग के अभाव का प्रश्न नहीं है बल्कि आपूर्ति अत्यधिक अपर्याप्त है। जमीनी स्तर तक प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की संख्या बढ़ाकर इसमें सुधार लाना चाहिए। देखा गया है कि 30 वर्ष से कम आयु की महिलाओं में से एक-तिहाई के तीन या ज्यादा बच्चे हैं। इनमें 28 फीसदी के दो बच्चे हैं। वे और बच्चे नहीं चाहतीं। परिवार नियोजन कार्यक्रमों में इन महिलाओं को केंद्र में रखा जाना चाहिए (इसमें डिलेवरी के बाद नसबंदी, अंतराल के लिए नसबंदी, लेप्रोस्कोपी से नसबंदी और सर्जरीहीन पुरुष नसबंदी के मिश्रण का उपयोग किया जा सकता है)।

गर्भाशय के भीतर लगाए जाने वाले गर्भनिरोधकों (आईयूडी) का उपयोग बहुत कम होता है। यदि इन्हें ठीक से लगाया जाए, बाद में उचित देखभाल की जाए, साइड इफेक्ट का प्रभावी प्रबंधन हो और पर्याप्त आपूर्ति की जाए तो आईयूडी के इस्तेमाल को लोकप्रिय बनाया जा सकता है, खासतौर पर उन राज्यों में जहां शिशु मृत्युदर बहुत ऊंची है। इसमें पहले जन्म देने वाली माताओं का पता लगाकर डिलेवरी के काफी पहले उन्हें आईयूडी के इस्तेमाल के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। गुणवत्ता और फालोअप पर अत्यधिक जोर देकर प्रसूति के तत्काल बाद आईयूडी एक अच्छा विकल्प हो सकता है। हालांकि, इसके उपयोग के बारे में फैली भ्रांतियों और सेवा देने वालों की गलतफहमियां दूर करने की जरूरत है।

फिर नसबंदी ऑपरेशन में लैंगिक संतुलन कायम करने की भी जरूरत है। यह स्वीकार करना होगा कि उपरोक्त सारे कदमों के बावजूद कुल प्रजनन दर में गिरावट लाने के लिए नसबंदी की जरूरत तो रहेगी ही। दुर्भाग्य यह है कि 70 के दशक में पुरुषों की जबरन नसबंदी के नतीजों के कारण राजनीतिक दल अब भी इस विषय से बिदकते हैं, लेकिन अब मानसिकता बदलने की जरूरत है और इस संदर्भ में संतुलन कायम करने की जरूरत है।

बिलासपुर में हुई त्रासदी ने हमें सबक दिया है कि नसबंदी शिविर आयोजित करने के हमारे तरीके पर गंभीर विचार की जरूरत है। इस प्रक्रिया में ऐसी सर्जरी की जरूरत होती है, जो विशेषज्ञ डॉक्टर ही सुसज्जित अस्पतालों में अंजाम दे सकते हैं और उन्हें ही देना भी चाहिए। यह आवश्यक है कि कार्यक्रम इस तरह से बनाए जाए कि उन्हें सहारा देने के लिए पर्याप्त तंत्र हो ताकि आधारभूत ढांचा व आपूर्ति को मजबूत कर बढ़ती अपेक्षाएं पूरी करने के साथ स्वास्थ्य के क्षेत्र में देश की स्थिति में सुधार भी लाया जा सके।

दैनिक भास्कर 12.11.2014

गलत स्वास्थ्य नीतियों का खामियाजा

अब तक शायद आप भूल गए होंगे उन महिलाओं को, जो छत्तीसगढ़ में चिकित्सक के हाथों बेमौत मारी गईं। भूल गए होंगे उन बच्चों के चेहरे, जिनकी तस्वीरें अखबारों में छपी थीं अपनी माताओं के शवों के इंतजार में बैठे हुए। वे मरने वाली महिलाएं बेनाम थीं, सो उनको भूलना आसान था। मगर इतनी जल्दी न भूलते, अगर वे संपन्न घरों की बेटियां होतीं और मुंबई या दिल्ली के किसी बड़े अस्पताल में इस तरह मारी जातीं। अपने देश का यही दस्तूर रहा है और यही रहेगा, जब तक हमारे शासकों को ध्यान न दिलाया जाए कि स्वास्थ्य सेवाओं में बुनियादी परिवर्तन की आवश्यकता है। बुनियादी इसलिए, क्योंकि हमारे राजनेताओं ने शुरू से ही यह तय कर लिया था कि शिक्षा-स्वास्थ्य के क्षेत्र में जनता के लिए एक अलग किस्म की सेवाएं होंगी, और खुद उनके लिए दूसरे किस्म की।

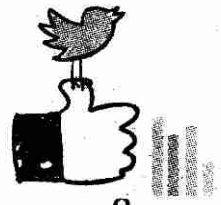

नजरिया

उस डॉक्टर को सख्त सजा मिले, जिसने रिकॉर्ड तोड़ने के लिए लापरवाही से नसबंदियां कीं।

तवलीन सिंह

असल में, उनकी आदतें हमने बिगाड़ी हैं। जब राजनेता और अधिकारी अपने इलाज के लिए विदेश जाया करते हैं, तब हम-आप उनका विरोध नहीं करते। किसी ने यह मालूम करने तक की जहमत भी नहीं उठाई है कि सोनिया गांधी हर दूसरे महीने किस देश में जाती हैं इलाज करवाने, और इस इलाज के पैसे कहां से आते हैं। हम तब भी चुप रहे, जब सरकार के अधिकारियों को विदेशों में इलाज करवाने की इजाजत दी पिछली मनमोहन सरकार ने। चुप रहे हम, जब हमारे शासकों ने इस बहाने से, कि गरीबों का इलाज मुफ्त होगा, निजी अस्पतालों के निर्माण के लिए महानगरों में कौड़ियों के दाम नगरपालिकाओं की जमीनें दीं। हालांकि ऐसा नहीं है कि हर बार हमारे शासकों को अब इलाज करवाने के लिए विदेश जाने की जरूरत है। मुंबई और दिल्ली में मैंने ऐसे अनेक अस्पताल देखे हैं, जो बेहतरीन विदेशी अस्पतालों का मुकाबला कर सकते हैं। मगर इनमें वे गरीब महिलाएं नहीं जा सकती हैं, जो नसबंदी करवाने बिलासपुर के टूटे-पुराने देहाती अस्पताल में गईं, क्योंकि दलालों ने उन्हें रुपये का लालच दिया। शर्म से डूब मरना चाहिए छत्तीसगढ़ की रमन सिंह सरकार को। सख्त सजा मिलनी चाहिए उस डॉक्टर को, जिसने रिकॉर्ड तोड़ने के लिए महिलाओं की नसबंदियां ऐसे शिविरों में कीं, जहां सफाई का बुनियादी इंतजाम तक नहीं था।

कांग्रेस के बड़े नेता इस घटना का राजनीतिकरण कर रहे हैं। मगर देश में यदि सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाएं इतनी बदतर हैं, तो दोष उनका है। इसलिए कि गलत स्वास्थ्य नीतियों की नींव कांग्रेस के राज में ही रखी गई। शुरू से निर्णय लिया गया होता कि विदेशों में इलाज कराने की इजाजत किसी भी राजनेता या अधिकारी को नहीं होगी, तो यकीनन स्वास्थ्य सेवाएं बेहतर होतीं।

इस त्रासदी में से कुछ अच्छा निकल सकता है, तो सिर्फ यह कि प्रधानमंत्री कम से कम इतना करें कि जिन राज्यों में भाजपा की सरकारें हैं, वहा स्वास्थ्य सेवाओं का एक नया ढांचा तैयार करें। लेकिन ऐसा करने के लिए उन्हें पहले पुराने ढांचे को गिराना होगा। इस स्तर पर परिवर्तन अगर नहीं लाया जाता है, तो कड़वा यथार्थ यही रहेगा कि इस तरह के हादसे होते रहेंगे, जिनमें इलाज की जगह मौत मिलती रहेगी देश के आम लोगों को।

अमर उजाला 17.11.2014

नसबंदी के दौरान हुई हालिया मौतों से पूरा देश अचंभित जरूर है, मगर स्वास्थ्य सुविधाओं के संदर्भ में मानक प्रक्रियाओं का मखौल बनाने की प्रवृत्ति देश के ज्यादातर हिस्सों में दिखती है।

और कितने हादसों का इंतजार

युवा महिलाओं की अफसोसनाक मौत की घटनाएं इससे पहले भी हुई हैं, और आगे भी हो सकती हैं। मगर इस बार ऐसा छत्तीसगढ़ के ग्रामीण इलाके में सरकार द्वारा आयोजित एक नसबंदी कैंप में हुआ। इसमें चौदह महिलाओं की मौत हो गई, और कइयों की हालत बेहद नाजुक बनी हुई है। आने वाले दिनों में मरने वालों की संख्या में इजाफा हो सकता है। आखिर इन मौतों की क्या वजह थी-नकली दवाएं, समुचित उपकरणों का अभाव या मानकों का उल्लंघन? यह भी हो सकता है कि महिलाओं की दुर्भाग्यजनक मौतों के पीछे ये तीनों वजहें रही हों। आरोप-प्रत्यारोप और अटकलबाजी का खेल जारी है।

पत्रलेखा चटर्जी

विकास संबंधी मुद्दों पर लिखने वाली वरिष्ठ स्तंभकार

हां, इस दौरान छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री रमन सिंह ने न्यायिक जांच के आदेश जरूर दे दिए हैं, और पुलिस ने इन ऑपरेशनों को अंजाम देने वाले डॉक्टर को गिरफ्तार कर लिया है। फिर भी, इस दुखांत घटना ने उस मानवीय बेरुखी पर सवाल उठाए हैं, जो असुरक्षित और अस्वास्थ्यकारी माहौल को लेकर ऐसे मामलों में बरती जाती है।

इसके अलावा इससे पूरी सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था की गुणवत्ता पर भी सवाल उठता है, जिसकी वजह से बेवजह हजारों मौतें होती हैं। इस संबंध में नियम-कानून भी बने हुए हैं। मगर किसी न किसी वजह से उनका पालन नहीं होता। कभी स्वास्थ्य केंद्रों में पर्याप्त प्रशिक्षित डॉक्टरों, नर्सों या कर्मचारियों के अभाव का हवाला दिया जाता है, और कभी बुनियादी सुविधाओं व उपकरणों की कमी का। अफसोस की बात है कि जो प्रशिक्षित होते हैं, वे भी मानक प्रक्रियाओं या सरकारी नियम-पुस्तिकाओं के पालन को हमेशा तवज्जो नहीं देते। छत्तीसगढ़ के ताजा मामले में

सरोकार

सरकार के उस निर्देश का खुला उल्लंघन देखने को मिला, जिसमें कहा गया है कि एक दिन में अधिकतम तीस ही ऑपरेशन किए जा सकते हैं, वह भी तीन अलग-अलग लैप्रोस्कोप्र की मदद से। छत्तीसगढ़ के एक निजी अस्पताल में, जो कि पंद्रह वर्षों से बंद पड़ा था, एक सर्जन ने छह घंटों से भी कम समय में 83 ऑपरेशन किए। इसके पर्याप्त सुबूत मौजूद हैं कि इनमें मानक प्रक्रियाओं का बिल्कुल पालन नहीं किया गया।

पीड़ित हमेशा गरीब होते हैं। 2010 में बिहार के पूर्णिया जिले के एक प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र में भी नसबंदी के ऑपरेशन के बाद दो महिलाओं की मौत हो गई थी। ऐसे और भी तमाम उदाहरण हैं। अगर यही त्रासदी दिल्ली के वसंत विहार या मुंबई के बांद्रा जैसे इलाकों में हुई होती, तो लोगों की नाराजगी की कल्पना की जा सकती थी। यानी किसी महिला की मौत को लेकर लोगों का रवैया इस पर निर्भर करता है कि वह महिला कौन है, और वह देश के किस हिस्से से ताल्लुक रखती है। ऐसी खबरें सुर्खियों में भी तभी आती हैं, जब मौतों की संख्या ज्यादा हो। नसबंदी के दौरान हुई हालिया मौतों से पूरा देश अचंभित जरूर है, मगर स्वास्थ्य सुविधाओं के संदर्भ में मानक प्रक्रियाओं का मखौल बनाने की प्रवृत्ति देश के ज्यादातर हिस्सों में दिखती है। मगर ग्रामीण बिहार की अपनी हाल की यात्रा के दौरान मैंने इस मामले में सुखद बदलाव देखे।

पटना के सुदूर इलाके धनरिया प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र में मैं एक युवा नर्स रीना कुमारी से मिली। उसने बड़े उत्साह से बताया कि दक्षिण भारतीय नर्सों की एक टीम ने किस तरह उसे और दूसरी नर्सों को साबुन से हाथ धोने, उपकरणों की सफाई, सुरक्षित डिलीवरी और संक्रमण से बचाव के बारे में प्रशिक्षित किया। वहीं की एक पचास वर्षीय नर्स गायत्री कुमारी ने मुझे बताया कि पहले न तो वह साबुन से हाथ धोती थी,और न ही दस्तानों का उपयोग करती थी। मगर, प्रशिक्षण के बाद अब उसकी आदतों में सुधार आया है। बाद में मुझे पता चला कि चिकित्सा सुविधाओं में सुधार की यह पहल बिहार सरकार के मोबाइल नर्स प्रशिक्षण कार्यक्रम का हिस्सा थी। यह कार्यक्रम बिल और मेलिंडा गेट्स फाउंडेशन और अन्य सहयोगी संगठनों की मदद से राज्य भर में फैले 80 प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों में चलाया जा रहा है। दो वर्षों के भीतर इस कार्यक्रम को राज्य के 300 स्वास्थ्य केंद्रों तक फैलाने की योजना है। उत्तर प्रदेश में भी यह पहल हो रही है।

दरअसल, हाथ धोने का सही तरीका या सर्जरी में उपयोग किए जाने वाले उपकरणों की सफाई छोटी बात लग सकती हैं, मगर समझने वाली बात है कि इससे ऑपरेशन के दौरान होने वाली बेवजह मौतों से बचा जा सकता है। इसके लिए जागरूक होने के लिए आखिर और कितनी मौतों का इंतजार करना होगा? अतीत गवाह है कि ऐसे मामलों के आरोपी कुछ समय बाद रिहा कर दिए जाते हैं। छत्तीसगढ़ में जो हुआ, और इस तरह के तमाम मामलों में दोषियों को उनके तार्किक अंजाम तक पहुंचाना जरूरी है। यह सिविल सोसाइटी और मीडिया की जिम्मेदारी है कि वे नजर रखें कि न्याय और नियमों का पालन हो रहा है, अथवा नहीं।

अमर उजाला 16.11.2014

महिलाओं की सुरक्षा के लिए मोबाइल ऐप

दुनिया में आज महिलाए अपने को सुरक्षित नहीं समझतीं, जबकि वह पुरुषों के साथ कदम से कदम मिला कर चलने को हमेशा तैयार हैं। महिलाओं की सुरक्षा भारत में आज सबसे बड़ा मुद्दा है, 16 दिसम्बर, 2012 को दिल्ली हुई घटना ने जहां पूरी दुनिया को हिला कर रख दिया था। वहीं हाल ही में उबर टेक्सी ड्राइवर द्वारा की कई घिनौनी हरकत ने एक बार फिर दिल्ली की तरफ सबका ध्यान खींच लिया है। ऐसा सिर्फ दिल्ली में ही नहीं बल्कि भारत के कई शहरों में हो रहा है। गूगल प्ले में कई ऐसे ऐप मौजूद हैं जो खतरे के समय हमारे सबसे करीबियों को आपकी लोकेशन के अलावा कई दूसरी जानकारियां भेजती हैं।

निर्भया ऐप : ये ऐप दिल्ली में हुई 16 दिसम्बर, 2012 की घटना के बाद नोएडा पुलिस ने बनाई थी। इस ऐप में एक क्लिक की मदद से आप पुलिस के साथ-साथ अपने रिश्तेदारों को अपनी सूचना दे सकते हैं। इसके अलावा इसमें अपने दोस्तों के नंबर भी फीड कर सकते हैं।

फाइट बैक : ये ऐप लोकेशन बेस तकनीक पर आधारित है जो खुद को बचाने में काफी मदद करती है, यूजर अपने परिवार वालों और दोस्तों को एसएमएस, ईमेल के जरिए मैसेज भेज सकती हैं। ऐप की मदद से यूजर अपनी लोकेशन भी सर्च कर सकता है। बस फोन में इंटरनेट डेटा होना चाहिए।

हेल्प एलर्ट : पैनिक बटन की जगह हेल्प बटन दबाना हमेशा सही रहता है, हेल्प एलर्ट ऐप इसी बात को ध्यान रखते हुए बनाई गई है। ऐप का प्रयोग हार्ट अटैक, किडनैपिंग या दूसरी घटनाओं में किया जा सकता है।

आईकॉलो : इस ऐप को डाउनलोड करते ही ये आपके फोन में एक्टीवेट हो जाता है जिसके बाद आप अपने फोन को सिर्फ हिलाकर कॉल कर सकते हैं, बस आपको इसके लिए कोई भी तीन फोन नंबर ऐप में सेव करने होंगे जिसमें जरूरत के समय शेक करते ही कॉल चली जाएगी। बस आपको 5 सेकेंड में तीन बार अपना फोन हिलाना है बाकी काम ऐप कर लेगी।

गो सुरक्षित : ये ऐप भी दूसरी ऐप्लीकेशनों की तरह काम करती है, इसकी खास बात है इसमें आपको 3-4 नहीं बल्कि 10 लोगों के कॉन्टेक्ट ऐड कर सकते हैं। ऐप जरूरत पड़ने पर सभी 10 नंबरों पर लोकेशन के साथ मैसेज भी सेंड कर देगा साथ ही आपका फेसबुक स्टेट्स और इमरजेंसी नंबर पर कॉल भी कर देगी। राष्ट्रीय सहारा 10.12.2014

मोबाइल एप देगा महिलाओं को फूलप्रूफ सेफ्टी

संजय टुटेजा/एसएनबी

नई दिल्ली। राजधानी में अब एक मोबाइल एप्स सभी महिलाओं को घर के भीतर भी तथा घर के बाहर भी फूलप्रूफ सेफ्टी व सिक्योरिटी देगा। यह पहला ऐसा एप्स होगा जो बिना इंटरनेट के तो काम करेगा ही साथ ही यदि मोबाइल में बैलेंस नहीं होगा तब भी यह एप्स अपना काम करेगा। किसी भी संकट के दौरान सहायता के लिए महिलाओं को केवल अपने मोबाइल के पॉवर बटन को दो-तीन बार दबाना होगा जिस पर तत्काल ही संकटग्रस्त महिला की लोकेशन दिल्ली सरकार की महिला हेल्पलाइन 181 तक पहुंच जाएगी।

राजधानी में टैक्सी में एक युवती से दुष्कर्म की घटना के बाद सरकार जहां एक बार फिर महिलाओं की सुरक्षा संबंधी उपायों पर मशक्कत कर रही है वहीं दिल्ली में महिला सुरक्षा के लिए जारी 181 हेल्पलाइन भी अब एक ऐसी नई शुरुआत करने जा रही है जो न केवल अपने आप में अनूठी है बल्कि यह शुरुआत दिल्ली की महिलाओं को प्रत्येक स्थान पर फूल प्रूफ सिक्योरिटी व सेफ्टी प्रदान करेगी। महिला हेल्पलाइन की प्रभारी खलीजा फारूकी ने बताया कि उन्होंने हेल्पलाइन के आईटी पार्टनर इन्द्रप्रस्थ इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी के सहयोग से एक ऐसा मोबाइल एप्स तैयार किया है जो सभी महिलाओं के लिए वरदान साबित होगा। इस एप्स के जरिए महिलाएं संकट के दौरान तो तत्काल मदद हासिल कर सकेंगी साथ ही यदि कोई बिना वजह फोन या एसएमएस के जरिए महिलाओं को परेशान करता है या सोशल मीडिया के जरिए महिलाओं को परेशान करता है तो यह एप्स ऐसे असामाजिक तत्वों को भी ट्रैक करेगा।

- बिना इंटरनेट तथा मोबाइल सिम में बैलेंस न होने पर भी चलेगा एप
- केवल मोबाइल का पावर बटन दबाने पर 181 महिला हेल्पलाइन को मिलेगी कॉल
- फिलहाल एन्ड्रायड फोन पर काम करेगा यह एप
- अवांछित फोन, एसमएस व सोशल मीडिया के जरिए उत्पीड़न करने वाले भी होंगे ट्रैक

उन्होंने बताया कि हेल्पलाइन के इस मोबाइल एप्स के लिए महिला को इंटरनेट कनेक्शन की जरूरत नहीं होगी। यह पहला ऐसा एप्स होगा जो बिना इंटरनेट कनेक्शन के चलेगा। यही नहीं यदि पीड़िता के मोबाइल में कोई धनराशि का बैलेंस नहीं है तो भी यह मोबाइल एप्स काम करेगा। उन्होंने बताया कि एक बार इस एप्स को मोबाइल में डाऊनलोड करने के बाद किसी भी संकट के समय महिलाओं को केवल अपने मोबाइल का पॉवर बटन लगातार दो-तीन बार दबाना होगा जिस पर तत्काल ही पीड़िता महिला की लोकेशन व उसके मोबाइल नंबर की जानकारी महिला हेल्पलाइन 181 तक पहुंच जाएगी। यह जानकारी मिलते ही हेल्पलाइन तत्काल पुलिस पीसीआर को मदद के लिए भेजेगी। इस एप्स को इन्द्रप्रस्थ इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी के प्रोफेसर डा.पुष्पेन्द्र के अधीन उनकी एक छात्रा श्रद्धा जैन ने तैयार किया है।

यह एप्स के जरिए तत्काल पुलिस सहायता उपलब्ध कराने के लिए केवल 181 के लिए ही पूरी तरह समर्पित पुलिस पीसीआर हासिल करने की कोशिश की जा रही है। इस एप्स का ट्रायल रन पिछले लगभग एक माह से किया जा रहा है। अब इसके लिए अलग सर्वर व आईपी हासिल करने की प्रक्रिया जारी है। इस माह के अंत तक इस एप्स को लांच कर गूगल प्ले स्टोर में डाल दिया जाएगा जहां से महिलाएं इसे डाऊनलोड कर सकेंगे। फिलहाल यह एप्स केवल एन्ड्रॉयड फोन पर काम करेगा लेकिन जल्द ही सभी प्रकार के सामान्य मोबाइल फोन सेट पर भी इस एप्स को डाउनलोड किया जा सकेगा। राष्ट्रीय सहारा 10.12.2014

महिलाएं कर सकेंगी प्री रजिस्ट्रेशन

महिलाओं की सुरक्षा के लिए तैयार किए गए इस एप्स में महिलाएं प्री रजिस्ट्रेशन भी करा सकेंगी। हालांकि रजिस्ट्रेशन न कराने वाली महिलाओं की जीपीएस लोकेशन भी एप्स के जरिए महिला हैल्पलाइन को मिलेगी लेकिन यदि महिलाएं इस एप्स में रजिस्ट्रेशन कर अपने परिचितों के व परिचितों के मोबाइल नंबर, घर का पता व अन्य जानकारी उपलब्ध कराती हैं तो संकट के समय मोबाइल बटन दबाने पर रजिस्टर की गई सभी जानकारी भी हैल्पलाइन के कम्प्यूटर पर प्रदर्शित होगी जिस पर संबंधित महिला पर आये संकट की जानकारी उसके परिवार व परिचितों तक भी पहुंचाई जा सकेगी।

निगरानी का ड्रोन आइडिया कितना सटीक!

मुद्दा

सुभाष गाताडे

निर्भया कांड की दूसरी बरसी के आसपास एक बार फिर वैसी ही परिस्थितियों में सामने आए बलात्कार के कांड ने जिस जनाक्रोश को जन्म दिया, पुलिस की कार्यप्रणाली पर जिस तरह सवाल खड़े हुए, उसी आपाधापी में आयी एक खबर पर अधिक चर्चा नहीं हुई। समाचार आया कि उत्तरी दिल्ली की पुलिस सुनसान सड़कों पर निगरानी के लिए नाइट विजन कैमरे लगे ड्रोन अर्थात अनमैन्ड एरिएल व्हेकल (हिवा में उड़नेवाला चालकरहित वाहन) का इस्तेमाल करनेवाली है। बताते हैं कि योजना को पुलिस मुख्यालय से अनुमति मिल चुकी है।

गौरतलब है कि दिल्ली पुलिस ने ड्रोन का इस्तेमाल इसके पहले 15 अगस्त, दुर्गा पूजा, गणेश विसर्जन से लेकर राजधानी दिल्ली में त्रिलोकपुरी व बवाना में सांप्रदायिक तनाव के मद्देनजर मोहर्रम के जुलूस पर निगरानी के लिए भी इस्तेमाल किया था। इस निगरानी मशीन ने पुलिस बलों को काफी आकर्षित किया है। जानकारों के मुताबिक आम तौर पर एक हजार वर्ग मीटर पर नजर के लिए दो मीटर लंबे, एक मीटर चौड़े और दो किलो से भी कम वजन वाले ड्रोन को प्रधानता दी जाती है, जो अपने वीडिओ तत्काल पुलिस कंट्रोल रूम को भेजता रहता है। त्रिलोकपुरी में मोहर्रम के वक्त प्रयुक्त ड्रोन किराये का था। अब जिसके इस्तेमाल की बात हो रही है वह डिफेन्स रिसर्च डैवलपमेंट आर्गनाइजेशन एवं आईआईटी पवई ने मिलकर बनाया है, जिसका नाम है 'नेत्र'। नाइट विजन कैमरे और हथियार लगे 'नेत्र' का इस्तेमाल रात में भी हो सकेगा और पुलिस नियंत्रण कक्ष में भेजे जा रहे वीडिओ देखते हुए ड्रोन को हथियार के इस्तेमाल का आदेश' भी दिया जा सकता है।

सोचने की बात है कि कानून व्यवस्था के पालन के नाम पर ड्रोन के माध्यम से साधारण नागरिकों के जीवन की निगरानी, उनकी निजता के उल्लंघन को वैधता प्रदान करने और इस तरह संकलित सूचनाओं को व्यक्ति विशेष या संगठन विशेष के खिलाफ इस्तेमाल के तौर पर नहीं देखा जाना चाहिए! क्या इस मसले पर भी बात नहीं होनी चाहिए कि आज की तारीख में हमारे पड़ोसी मुल्क पाकिस्तान के सीमावर्ती इलाकों में 'आतंकवाद रोकने के नाम पर' ड्रोन जो कहर बरपा रहे हैं, वैसी स्थितियां किसी मुल्क में आंतरिक अशान्ति कायम करने के नाम पर कायम की जा सकती हैं। कहने का आशय इतना भर है कि ड्रोन के इस्तेमाल को लेकर कोई नियम बनने चाहिए या नहीं? गौरतलब है कि कुछ माह पहले किसी बड़े होटल ने मुम्बई में किसी निजी कंपनी के ड्रोन का इस्तेमाल कर खाने का ऑर्डर पूरा किया था। पूरे मुल्क में उसकी चर्चा चली और सरकार द्वारा कहा गया कि आगे इसकी इजाजत नहीं दी जा सकती क्योंकि उसका इस्तेमाल आतंकी भी कर सकते हैं।

भारत के नागरिक जीवन में ड्रोन के आगमन की खबर अभी हाशिये पर है जबकि 'वॉशिंगटन पोस्ट' में प्रकाशित लेख के मुताबिक अमेरिका में संघीय, राज्य और स्थानीय कानून लागू करनेवाली एजेंसियों द्वारा घरेलू निगरानी के लिए

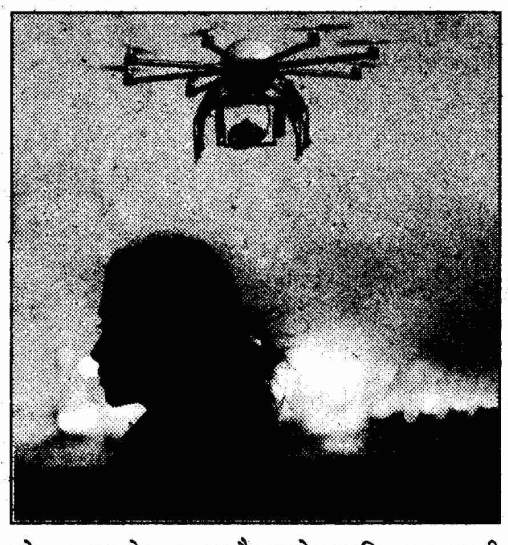

ड्रोन्स का इस्तेमाल बढ़ा है। उनके मुताबिक सरहद की निगरानी के लिए ड्रोन को किराये पर लेकर अंजाम दिया जा रहा है। भारतीय ड्रोन के इस्तेमाल के संभावित खतरों के प्रति बेखबर हों, मगर जहां तक अमेरिकी समाज का सवाल है, तो अमेरिका के जनप्रतिनिधियों-सीनेटरों में भी इसे लेकर चिन्ता व्याप्त है कि नागरिक जीवन की देखरेख के नाम पर उनका जिस तेजी से इस्तेमाल बढ़ा है और जितनी तेजी से अमेरिकी पुलिस का सैन्यीकरण हुआ है, इन दोनों के सम्मिलन के काफी डरावने नतीजे आ सकते हैं। पिछले दिनों अमेरिकी सीनेट में इसे लेकर काफी बहस चली और बाद में इसके मापदंड तय करने के लिए विशेष कमेटी गठित हुई। इस मामले में डेमोक्रेटिक पार्टी की सीनेटर रह चुकी हैं डायने फाइनस्टाईन के मुताबिक एक सुबह उन्होंने देखा कि उनके घर की खिड़की के आसपास एक ड्रोन मंडरा रहा है। वह हैरान थीं कि आखिर ड्रोन किसके इशारे पर वहां भेजा गया है और वह क्या रेकार्ड कर रहा है? यह बात वह सीनेट की एक कमेटी के सामने रख रही थी, जिसमें ड्रोन के इस्तेमाल से लोगों की निजता के अन्त और समूचे समाज के एक निगसनी के अन्दर रहने वाले समाज में रूपान्तरण आदि को लेकर कई बातें हुईं। नागरिक आजादी के लिए सक्रिय समूह 'इलेक्ट्रॉनिक फ्रंटियर फाउंडेशन' द्वारा 'सूचना की आजादी अधिनियम' के अन्तर्गत डाली गयी याचिका में पता चला कि 'कस्टम्स एंड बॉर्डर प्रोटेक्शन, जिसके पास अमेरिकी रक्षा विभाग के बाद ड्रोन का सबसे बड़ा जखीरा है, ने 2010 से 2012 के बीच 700 ऐसे निगरानी मिशनों को अंजाम दिया। दुनिया के पैमाने पर देखें तो ड्रोन की बढ़ती लोकप्रियता का आलम यह है कि एक अनुमान के मुंताबिक आनेवाले दशक में उसका बाजार 90 बिलियन डॉलर तक पहुंचनेवाला है। इसके मद्देनजर ड्रोन का बढ़ता इस्तेमाल अमेरिकी सार्वजनिक जीवन के स्वरूप को बदल सकता है। अमेरिकी सिविल लिबर्टीज यूनियन के कुछ प्रस्तावों के मुताबिक हम ऐसे 'निगरानी समाज' में न रूपान्तरित हों जहां हमारा हर कदम मॉनिटर हो, रेकार्ड किया जाए और सरकार द्वारा उसकी पड़ताल हो। दिलचस्प है कि कई अमेरिकी राज्यों ने ड्रोन के इस्तेमाल को लेकर कई नियम बनाए हैं।

अमेरिकन सिविल लिबर्टीज यूनियन के मुताबिक कानून का जिम्मा संभालने वाली एजेंसियों को इसका इस्तेमाल आपातकाल में वारंट के साथ ही करना चाहिए और जब यह तय करने का आधार हो कि ड्रोन जिन सबूतों को इकट्ठा करेगा, उससे एकत्रित सबूत किसी खूंखार अपराधी पर अंकुश लगाने में काम आएंगे। उसके मुताबिक उसके द्वारा एकत्रित फोटो को तभी संग्रहित रखना चाहिए जब यह मानने का आधार हो कि उससे किसी जांच में मदद मिल सकती है। उसके इस्तेमाल को लेकर नीति भी निर्धारित होनी चाहिए और उसे जनता के प्रतिनिधियों द्वारा न कि पुलिस महकमे द्वारा तय किया जाना चाहिए। इतना ही नहीं, दुरुपयोग को रोकने के लिए उसके खुले ऑडिट की व्यवस्था करनी चाहिए। अन्त में, यूनियन ने जोर देकर कहा है कि उसमें हथियार नहीं लगाने चाहिए। कभी सांप्रदायिक तनाव को नियंत्रित रखने तो कभी सूनी सड़कों की निगरानी के नाम पर जब अपने यहां ड्रोन का रास्ता सुगम किया जा रहा है, तब क्या यह मौजूं नहीं होगा कि अमेरिकी अनुभव से सीख लेकर देश सरकार पर दबाव डाला जाए वह जनहित में उनके इस्तेमाल के नियम तय करे। राष्ट्रीय सहारा 17.12.2014

महिलाएं घर से लेकर सड़कों तक असुरक्षित

राजीव रंजन /एसएनबी

नई दिल्ली। एक बार फिर यह साबित हो गया है कि राजधानी में रहने वाली बच्ची, किशोरी, युवती तथा महिलाएं घर की चारदिवारी से लेकर सड़क तक असुरक्षित महसूस करती है। जहां इस साल उबर कैब रेप की घटना ने दिल्ली को फिर शर्मसार किया वहीं इस घटना से गुस्साए लोग निर्भया गैंग रेप की तरह घटना से आक्रोशित होकर सड़क पर उतर आए। सूत्रों की माने तो निर्भया गैंगरेप की घटना के बाद राजधानी में दुष्कर्म की संख्या में लगभग 35 फीसद तक बढ़ोतरी हुई है और दिल्ली पुलिस की तरफ से दुष्कर्म को रोके जाने की सारी कवायद हवा-हवाई साबित हो गई।

पुलिस सूत्रों के अनुसार इस साल यदि आंकड़ों पर गौर किया जाए तो दुष्कर्म जैसे जघन्य मामलों में खासी बढ़ोतरी देखी गई। साल 2013 में जहां दुष्कर्म का आंकड़ा 1412 था वहीं इस साल अक्टूबर तक यह 1790 के पार कर गया। वसंत विहार में निर्भया गैंगरेप से उपजे आंदोलन के बाद दिल्ली में रहने वाली महिलाओं की सुरक्षा को लेकर दिल्ली पुलिस की तरफ से दुष्कर्म जैसे जघन्य मामलों को रोकने के लिए छेड़ी गई मुहिम का कोई असर नहीं दिखा और पिछले दो साल के भीतर करीब 35 फीसद दुष्कर्म के मामलों में बढ़ोतरी देखी गई। हालांकि पुलिस की तरफ से यह दावा किया गया है कि पहले दुष्कर्म की घटनाओं को दर्ज करने में पुलिस की तरफ से भी लापरवाही बरती जाती थी और महिलाएं भी खुद के साथ हुई ज्यादती की शिकायत करने में डर महसूस करती थी लेकिन अब ऐसा कतई नहीं है। दिल्ली पुलिस का दावा है कि निर्भया गैंगरेप के बाद महिलाएं अब बेहिचक थाना पहुंचकर अपने साथ हुई हैवानियत की शिकायत कर रहीं है बल्कि इसके लिए वह हेल्पलाइन तथा हेल्प डेस्क आदि का भी सहारा ले रहीं है।

■ उबर कैब रेप कांड के बाद फिर फूटा पुलिस के खिलाफ गुस्सा ■ निर्भया गैंगरेप के बाद दुष्कर्म के 35 फीसद मामलों में हुई बढ़ोतरी

आंकड़े बताते हैं कि महिलाएं जहां ज्यादा खुद को सुरक्षित महसूस करती है वहीं उनके साथ ज्यादा दुष्कर्म व छेड़छाड़ के मामले उजागर हुए । सूत्र बताते है कि घर के आंगन में हुई दुष्कर्म व छेड़छाड़ के मामलों में इस साल भी खासी बढ़ोतरी देखी गई और ऐसे मामलों में दुष्कर्म व छेड़छाड़ की शिकार हुई महिलाओं का कोई न कोई परिचित शामिल था। सूत्र बताते है कि इस साल जो बलात्कार के मामले सामने आए। इनमें पिता के द्वारा 43,भाई के द्वारा 27, चाचा के द्वारा 32, चचेरे भाई के द्वारा 4, ससुर द्वारा 8, दामाद द्वारा 8 तथा दोस्त द्वारा 643 मामलों को अंजाम दिया गया। पुलिस सूत्रों ने बताया कि छेड़खानी के मामलों में भी पति, पिता, चाचा, दोस्त, ससुर व पड़ोसी हैवान बने और ऐसे मामलों में पति के खिलाफ 38, चाचा के खिलाफ 29, ससुर के खिलाफ 57, पड़ोसी के खिलाफ 967, दोस्त के खिलाफ 115 तथा परिवार के संबंधियों के खिलाफ 94 मामले दर्ज किए गए।

कई मार्ग आज भी हैं असुरक्षित : निर्भया गैंगरेप के बाद दिल्ली पुलिस ने उन मार्गों को चिह्नित किया था, जिन मार्गों पर रोशनी की पर्याप्त व्यवस्था नहीं थी। ऐसे मार्गों पर सफर करने वाला महिलाओं के लिए सुरक्षा के लिए विशेष उपाए किए जाने का दावा किया गया था लेकिन यह दावा आज भी बेमानी साबित हो रहा है। सूत्र बताते है कि नई दिल्ली के 10, मध्य जिले के 27, उत्तरी दिल्ली के 95, दक्षिण-पूर्व जिले के 245, पूर्वी दिल्ली के 312, उत्तर-पश्चिम दिल्ली के 94, बाहरी दिल्ली के 117, दक्षिण पश्चिम दिल्ली के 465, दक्षिणी दिल्ली के 376 तथा पश्चिमी दिल्ली के 82 मार्ग ऐसे है जहां महिलाओं को सफर करने में डर महसूस होता है। दिल्ली पुलिस का दावा है कि इन जगहों पर स्ट्रीट लाइट लगाने के लिए कई बार सिविक एजेंसियों को पत्र भी लिखा गया लेकिन सिविक एजेंसियों ने अब तक पर्याप्त रोशनी का प्रबंध नहीं किया है।

100 फीसदी तक बढ़े कई अपराध

इस साल राजधानी में अपराध को लेकर खासी बढ़ोतरी दर्ज की गई। इनमें दुष्कर्म व छेड़छाड़ के मामलों में तो खासी बढ़ोतरी हुई ही साथ ही किडनैपिंग, फिरौती के लिए किडनैपिंग, हत्या के प्रयास, मारपीट आदि घटनाओं में भी बढ़ोतरी दर्ज की गई। पुलिस सूत्र बताते है कि चोरी की वारदात ने तो पिछले सारे रिकॉर्ड को ही ध्वस्त कर दिया है और चोरी के मामलों में चार गुणा बढ़ोतरी दर्ज की गई है।

राष्ट्रीय सहारा 28.12.2014

सुरक्षा के सवाल पर महिला पर ही क्यों बंदिश!

मुद्दा

अंजलि सिन्हा

हमारे समाज में इस हकीकत से सभी लोग परिचित हैं कि महिलाओं के लिए रात के समय बाहर निकलने के मामले में एक अघोषित कर्फ्यू लग जाता है। रात बढ़ने के साथ-साथ सार्वजनिक वाहनों से लेकर सड़कों तक अकेली महिलाओं का मिलना कम से कम होता जाता है। हालांकि अब समय-समय पर इसका प्रतिकार भी दिखता रहा है। दो साल पहले निर्भया कांड को लेकर जब जबर्दस्त आक्रोश व्याप्त था, तब कहीं-कहीं रात के वक्त एकत्रित होकर स्त्रियों ने इस परिपाटी को चुनौती देने की कोशिश की थी। महिलाओं के लिए इस तरह के अघोषित कर्फ्यू के सामने अगर यह सुनाई दे कि रात में पुरुषों के लिए भी कहीं कर्फ्यू लगा है, तो यह अचरज की ही बात होगी। लेकिन पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं के खिलाफ बढ़ती यौन हिंसा की स्थिति कभी कभी इस तरह के नायाब सुझावों एवं प्रयोगों को भी सामने लाती है।

ऐसा ही एक नायाब प्रयोग इन दिनों दक्षिण अमेरिका के कोलम्बिया के शहर बुकारामांगा में देखने को मिला। स्थानीय प्रशासन द्वारा नौ अक्टूबर को यहां एक रात के लिए पुरुषों के घर से बाहर निकलने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। यह अनोखा प्रस्ताव महिलाओं के खिलाफ बढ़ती यौन हिंसा को लेकर चलाए जा रहे अभियान का हिस्सा था। साठ हजार की आबादी वाले बुकारामांगा में हाल के दिनों में यौन हिंसा की घटनाओं में बढ़ोत्तरी दर्ज की गई है। राज्य गवर्नर आफिस ने मुद्दे के प्रति जागरूकता बढ़ाने के उद्देश्य से एक रात पुरुषों के बाहर निकलने पर प्रतिबंध लगाते हुए सिर्फ महिलाओं से घूमने-फिरने का आह्वान किया। इस समय यदि किसी पुरुष को अपने जरूरी काम से बाहर निकलना पड़ा तो उसे मेयर से विशेष अनुमति लेने के लिए कहा गया था। सभी दुकानदारों, क्लबों आदि से अपील की गयी कि वे महिलाओं के लिए विशेष कार्यक्रमों का आयोजन करें तथा इसके लिए उन्हें इन्सेंटिव भी दिया जाएगा। साथ ही यदि पुरुष बिना अनुमति के सड़क पर आए तो उन्हें जुर्माना भरने के लिए कहा गया था। निश्चित ही यह महिला सुरक्षा के मद्देनजर एक प्रतीकात्मक कार्रवाई थी।

दिलचस्प था कि यह कोई पहली दफा नहीं था कि कोलम्बिया में पुरुषों के लिए रात के समय घूमने-फिरने पर पाबंदी लगायी गई हो। 2001 में कोलम्बिया की राजधानी बोगोटा में जिसकी आबादी 70 लाख के करीब है, तत्कालीन मेयर मोकस की पहल पर पुरुषों के बिना रात का प्रस्ताव रखा गया और उस पर अमल हुआ। उस रात सिर्फ महिलाओं के कन्सर्ट हुए, पार्क में सिर्फ महिलाओं ने पार्टियां आयोजित की; फायर स्टेशनों और पुलिस स्टेशनों पर सिर्फ महिला कर्मचारी दिखीं। लगभग पचास लाख महिलाओं ने उस रात के आयोजन में हिस्सेदारी की। दरअसल उसके पहले पांच सालों में पुरुषजनित हिंसा में करीब साढ़े अठारह हजार महिलाएं मारी गयी थीं और मेयर अनतानास मोकस को लगा कि कोलम्बियाई पुरुषों को सबक सिखाना जरूरी है।

पिछले दिनों इन प्रस्तावों की चर्चा करते हुए एक राष्ट्रीय अंग्रेजी दैनिक में लिखे आलेख में यह भी बताया

गया है कि सत्तर के दशक के शुरू में इस्राइल की प्रधानमंत्री गोल्डा मायर के मंत्रिमंडल में स्त्रियों के खिलाफ हिंसा को लेकर कैबिनेट में विचार-विमर्श चल रहा था। मंत्रिमंडल के पुरुष सदस्यों में से किसी ने प्रस्ताव रखा कि ऐसी घटनाओं से बचने के लिए अंधेरा होने के बाद महिलाओं को अकेले घर से बाहर न जाने के लिए कहा जाए। गोल्डा मायर ने इसका प्रतिवाद कर कहा कि हमला महिलाओं पर होता है और पुरुष हमला करता है, लिहाजा पुरुषों के रात में घर से बाहर निकलने पर पाबन्दी लगे। यद्यपि बात वहीं रह गयी, लेकिन मुद्दे को समझने के लिए यह प्रतिक्रिया बिल्कुल सटीक थी यानी हिंसा रोकने के लिए जो कदम बढ़ाए जाएं वह पीड़ित को ही सजा देने वाले नहीं होने चाहिए।

अपनी बात करें तो महिलाओं पर होने वाली हिंसा को रोकने में नाकाम हमारे समाज में ऐसे नुस्खे पेश किए जाते हैं जो महिलाओं पर नयी बंदिशें लगानेवाले होते हैं, उनकी गतिशीलता, उनके पहनावे को नियंत्रित करनेवाले होते हैं। महिलाओं को खुद को कैसे सुरक्षित रखना चाहिए तथा अंधेरा होने के बाद घर से बाहर नहीं निकलना चाहिए जैसी सलाहें दी जाती हैं। कोलम्बिया की प्रतीकात्मक कार्रवाइयों के जरिए जो संदेश देने की कोशिश की गयी, पुरुष समुदाय को अपने व्यवहार को लेकर आत्मपरीक्षण करने के लिए कहा गया, उस तरह की प्रक्रिया हमारे यहां क्रियान्वित होते क्यों नहीं दिखती! उदाहरण के तौर पर एक बार एक फतवे में यह भी कहा गया कि मुस्लिम महिलाओं को अपने नकाब से खुली आंखों से नहीं देखना चाहिए बल्कि सामने बनी जाली से देखना चाहिए ताकि उनका चेहरा न दिखे। दलील दी गयी कि उनकी सुन्दर आंखें देख पुरुषों का मन बहक जाता है। अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में यह नियम लम्बे समय से था कि छात्राएं लाइब्रेरी में बैठ कर पढ़ नहीं सकती क्योंकि इससे पुरुष छात्रों का ध्यान पढ़ाई में नहीं लगता है।

बाहर की असुरक्षा का सामना करने के लिए कैसे पीड़ित को ही सजा दी जाती है इस तरह के अनेक उदाहरण हमारे समाज में मौजूद हैं। आज कल शौचालय पर खूब चर्चा हो रही है। कोई भी इस तथ्य से रूबरू हो सकता है कि सार्वजनिक स्थलों पर महिला शौचालयों पर अक्सर ताले लटके होते हैं और इसका कारण भी यही बताया जाता है कि वहां असामाजिक तत्वों के घुसने तथा महिलाओं को निशाना बनाने का खतरा होता है। नगर निगम के शौचालयों में भी महिलाओं के लिए बहुत कम व्यवस्था होती है और जो होती है वह भी चलती हालत में नहीं होता है। जब शीला दीक्षित दिल्ली मुख्यमंत्री थी तब किसी पत्रकार का ध्यान सचिवालय के महिला शौचालयों पर गया और उसने पूछा कि शाम छह बजे तक यहां के शौचालय क्यों बन्द हो जाते हैं जबकि महिलाएं वहां देर रात तक काम करती हैं। वहां पर भी असुरक्षा एवं असामाजिक तत्वों का खतरा जैसी बातें बतायी गयी थी। कई अस्पतालों तथा अन्य सार्वजनिक स्थानों पर भी ऐसी स्थिति अक्सर देखने को मिलती है लेकिन रोज महिलाएं कहां कितनी शिकायत करती फिरें। इसी तरह रात्रि शिफ्ट में काम पर जाने के लिए आतंक का माहौल होता है और यही सलाह घर परिवार तथा कंपनी मालिकों से मिलती है कि सुरक्षा कारणों से महिलाओं से रात में काम नहीं कराया जाता है। यूं तो हर श्रमिक को रात में आराम मिले तो अच्छा है लेकिन यदि काम करना ही पड़े तो महिलाओं को यह छूट सिर्फ सुरक्षा कारणों से मिले जिसके लिए वह जिम्मेदार नहीं हैं तो यह गलत है।

राष्ट्रीय सहारा 18.10.2014

अपनी बात दिल्ली की घटना के लिए सिर्फ टैक्सी सेवा को दोषी ठहराना महिला सुरक्षा को आउटसोर्स करने जैसा है

महिलाओं की सुरक्षा किसके भरोसे?

महिला सुरक्षा किसी बाहरी एजेंसी के भरोसे नहीं छोड़ी जा सकती फिर चाहे पुलिस के पास 27 वर्षीय महिला यात्री से दुराचार के मामले में उबर टैक्सी कंपनी के खिलाफ ठोस आरोप ही क्यों न हों। दिल्ली में दुराचार के लिए टैक्सी कंपनी को दोषी ठहराना तो महिला सुरक्षा को आउटसोर्स करने जैसा ही हुआ। कम ही लोग मानेंगे कि यह मामला घोर लापरवाही का नहीं है।

अद्वैता काला
पटकथा लेखिका
और कथाकार
advaita0403@gmail.com

उबर को देखें तो वह अपने ड्राइवरों की पृष्ठभूमि जांचने की कड़ी प्रक्रिया के वादे पर खरी नहीं उतरी है। इस मामले में तो लगता है कि कंपनी को ज्यादा से ज्यादा कुछ मालूम था तो इतना ही कि ड्राइवर के पास लाइसेंस था। ऐसा लाइसेंस जो दिल्ली में जारी नहीं किया गया था, जिससे काम चलने लायक माना जाता है। क्या उबर जैसे ब्रांड के तहत काम करने के लिए इतना काफी है? अपनी वेबसाइट पर उबर अमेरिका में अपनी कैब ड्राइवरों की पृष्ठभूमि की जांच के लिए बहुस्तरीय प्रक्रिया की बात करती है। फिर उसने यही प्रक्रिया भारत में भी अपनानी जरूरी क्यों नहीं समझी? खासतौर पर तब जब भारत में महिलाएं सार्वजनिक क्षेत्र में अपनी जगह के लिए संघर्ष कर रही हैं और जिसका बहुत प्रचार भी हुआ है। इसके साथ उसकी सुरक्षा लगातार चिंता का विषय बना हुआ है। दो साल पहले तो इसी मुद्दे पर पूरा देश आंदोलित था। हालांकि, उबर को ज्यादा से ज्यादा इस बात का दोषी माना जा सकता है कि उसने हमें यह यकीन दिलाकर कि उसके ड्राइवर व टैक्सी सुरक्षित हैं, झूठी सुरक्षा के अहसास में गाफिल बना दिया। थोड़ा गौर से देखें तो उबर के 'बिजनेस मॉडल' के तहत टैक्सी में सुरक्षा को सुनिश्चित करना लगभग असंभव बात है। सच तो यह है कि रात में सार्वजनिक परिवहन के किसी अन्य माध्यम की तुलना में उबर अधिक सुरक्षित नहीं है। यदि मुझसे पूछा जाए तो मैं 'संख्या में सुरक्षा' के सिद्धांत पर भरोसा करके मेट्रो में जाना पसंद करूंगी।

हालांकि, इस मामले में भी हम जानते हैं कि किसी अनहोनी पर साथ में सफर कर रहे लोग कैसा व्यवहार करते हैं। मेरठ और रोहतक की घटनाएं बताती हैं कि जब दोनों मामलों में महिलाएं अपनी सुरक्षा के लिए संघर्ष कर रही थीं तो साथ के अन्य लोग कैसे मूक दर्शक बने रहे। हम चाहें इस तथ्य की बात न भी करें कि कौन दोषी था पर हिंसा रोकने के लिए भी कोई आगे नहीं आया। यहां मैं सुरक्षा के व्यापक सवाल पर आती हूं कि दो साल पहले इस मुद्दे पर पूरी दिल्ली सड़कों पर उतर आई थी, उसके बाद से क्या बदला है? हमें तो पहले ही झलक मिल गई है कि आने वाले दिनों में कैसी परिस्थितियों की अपेक्षा करनी चाहिए। हम 'आप' और कांग्रेस कार्यकर्ताओं को राजधानी में प्रदर्शन करते देख ही चुके हैं, जो सारा दोष भाजपा सरकार पर मढ़ने की फिराक में हैं। टीवी की बहसों में तो राजनीतिक दलों ने दोषारोपण का खेल शुरू भी कर दिया है। प्रत्येक दल दूसरे के लिए महिला सुरक्षा का रिकॉर्ड पेश कर रहा है और अनजाने ही खतरनाक रूप से यह जाहिर कर रहा है कि महिलाओं की सुरक्षा पूरे देश का ही मुद्दा है, फिर सरकार चाहे जिस दल की क्यों न हो। राजनीतिक दलों को अभी यह अहसास ही नहीं है कि इस देश में महिला मतदाताओं की संख्या पुरुषों की तुलना में सिर्फ 1.41 फीसदी ही कम है (आम चुनाव 2014 के आंकड़ों के मुताबिक) और वह एक ऐसा वोट बैंक है, जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती, न ही की जानी चाहिए।

उबर पर प्रतिबंध लगा दिया गया है और सोशल मीडिया इस कदम के पक्ष और विरोध में उबल पड़ा है। इस टैक्सी सेवा की सुविधा को देखते हुए वे इस तथ्य की अनदेखी कर रहे हैं कि उबर पर प्रतिबंध को जर्मनी और हॉलैंड की अदालतों ने भी सही माना है। अन्य यूरोपीय देशों में भी इसी प्रकार की कार्रवाई अपेक्षित है। तथ्य तो यह है कि यह सुविधा भी सिर्फ रैफर करने की सुविधा भर है। मोटेतौर पर देखें तो व्यवस्था यह है कि आप कंपनी से संपर्क करते हैं और वह किसी ड्राइवर से संपर्क कर टैक्सी भेज देती है। अमेरिका में तो यह अपने ड्राइवरों की जांच के लिए कड़ी प्रक्रिया अपनाने का दावा करती है (वास्तव में ऐसा है अथवा नहीं), लेकिन यहां वह ऐसा नहीं करती, जिससे यह संकेत मिलता है कि वे भारतीय कानूनों को 'चलता है' के रवैये से लेती है, जो हमारी ही करतूत है। हमने ही अपने कानूनों का मखौल उड़ाकर यह छवि निर्मित की है। उबर के सीईओ का बचाव इतना निर्लज्ज था कि उसने तो इस घटना के लिए टैक्सी लाइसेंस प्रक्रिया में जांच की कड़ी प्रक्रिया के अभाव को ही दोषी ठहरा दिया। यह एक ऐसा आरोप है, जिसे हमें कड़वे घूंट के साथ स्वीकार करना होगा, क्योंकि यही सच्चाई है, लेकिन हमारे राजनेता और जनप्रतिनिधि इस मुद्दे का इस्तेमाल राजनीतिक लाभ लेने के लिए ही करते रहेंगे बजाय इसके कि समस्या के समाधान की दिशा में वे कोई रचनात्मक काम करें। ऐसी समस्या, जिसमें उन सब ने अलग-अलग मात्रा में योगदान दिया है।

नेशनल क्राइम ब्यूरो रिकॉर्ड 2013 के मुताबिक महिलाओं के लिए पांच सर्वाधिक असुरक्षित राज्यों में वे राज्य शामिल हैं जहां सपा, तृणमूल कांग्रेस और भाजपा का राज है। यानी कोई भी प्रमुख दल अपनी जिम्मेदारी से नहीं बच सकता। उंगली उठाने में जिस पार्टी की विशेषज्ञता है और जो दिल्ली से किए अपने वादे से मुकर गई थी, उस आम आदमी पार्टी ने आरोप-प्रत्यारोप की मर्यादा सबसे पहले तोड़ी है, लेकिन जनता को अब और मूर्ख नहीं बनाया जा सकता। दिल्ली पुलिस तो दुष्कर्मी को फुर्ती से पकड़कर खुद की पीठ थपथपाने में लग गई है जबकि वास्तविकता यह है कि आरोपी ड्राइवर को इसी प्रकार के अपराध के लिए पहले भी गिरफ्तार किया गया है और वह सात माह हिरासत में भी रह चुका है। फिर यह बात भी है कि दो साल पहले सारे आंदोलन के बाद भी राष्ट्रीय राजधानी में ऐसी घटनाएं थम नहीं रही हैं।

इस पूरे घटनाक्रम में यदि किसी बात को ध्यान में लाने की जरूरत है तो वह उस युवा महिला की बहादुरी है, जो उन सारे नेताओं की तुलना में महिलाओं की सुरक्षा की सबसे बड़ी पैरोकार बनकर उभरी हैं, जिन्हें हम टीवी बहसों में देखते हैं, क्योंकि उसने जो किया है, उसका उन्होंने केवल वादा भर किया है। अपनी दूरदृष्टि और चरित्र-बल के आधार पर उसने दिल्ली की गलियों से एक दुष्कर्मी को बाहर निकालकर कठघरे तक पहुंचाया है। इसके लिए उसकी सराहना की जानी चाहिए। यह घटना शहर की हम महिलाओं को याद दिलाती है कि जिस हीरो की हमें जरूरत है, वह वीरांगना के रूप में हमारे बीच से ही आएंगी। रोहतक में मनचलों की पिटाई करने वाली लड़कियों ने दिखा ही दिया है कि हमें अपनी लड़ाई खुद लड़नी होगी।

दैनिक भास्कर 10.12.2014

लैंगिक समानता में बराबर पिछड़ते हम

मुद्दा

जाहिद खान

लैंगिक समानता पर वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम यानी वैश्विक आर्थिक मंच द्वारा हर साल जारी होने वाली रिपोर्ट बताती है कि भारत इस सूचकांक पर बीते साल के 101वें स्थान से लुढ़ककर 114वें पर पहुंच गया है। यानी तमाम सरकारी, गैर-सरकारी कोशिशों के बावजूद देश में स्त्री-पुरुष के बीच असमानता और बढ़ी है। किसी समय इस मामले में चीन और भारत एक स्तर पर थे, पर आज हम चीन से बहुत पिछड़ गए हैं। फिलवक्त चीन इस मामले में दुनिया में 87वें पायदान पर है। इस क्रम में ब्राजील 71वें और रूस 75वें स्थान पर है। सबसे ज्यादा चिंताजनक और शर्मनाक यह कि एशिया के कई छोटे और पिछड़े देशों ने स्त्री-पुरुष के बीच असमानता की खाई को ज्यादा बेहतर तरीके से पाटा है जबकि अपने यहां ऐसी कोई कोशिश नहीं दिखती।

वैश्विक आर्थिक मंच, 2006 से हर साल वैश्विक स्त्री-पुरुष असमानता रिपोर्ट जारी कर रहा है। जिससे पता चलता है कि दुनिया में लैंगिक समानता के स्तर पर क्या सुधार आया? रिपोर्ट में खास तौर से यह देखने की कोशिश होती है कि विभिन्न देश अपने यहां स्त्री-पुरुष के बीच स्वास्थ्य, शिक्षा, राजनीतिक भागीदारी, संसाधन और अवसरों का वितरण किस तरह करते हैं? मंच की हालिया रिपोर्ट में 142 देश शामिल हैं। रिपोर्ट के मुताबिक बीते साल स्वास्थ्य के क्षेत्र में लगभग सभी देशों ने तरक्की की है। शिक्षा के क्षेत्र में भी स्थिति सुधरी है लेकिन तमाम प्रयासों के बाद भी पूरी दुनिया में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी बेहद कम है। दुनिया के नीति-निर्माताओं में महिलाओं की भागीदारी सिर्फ 21 फीसद है। आइसलैंड के नेतृत्व में पांच उत्तरी यूरो के देश स्त्री-पुरुष समानता के लिहाज से जहां अव्वल रहे, वहीं यमन लगातार नौवें साल आखिरी पायदान पर रहा। निकारागुआ, रवांडा, आयरलैंड, फिलिपीन और बेल्जियम का नाम शीर्ष दस देशों में शुमार किया गया। अमेरिका बीते साल के मुकाबले तीन पायदान ऊपर चढ़कर 20वें स्थान पर रहा। अमेरिका में लैंगिक समानता के स्तर में इसलिए बढ़ोतरी हुई कि उसने बीते साल स्त्री-पुरुष के बीच वेतन के अंतर को कम किया और अमेरिकी सदन में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाई।

लैंगिक समानता के मामले में भारत की स्थिति में गिरावट नई बात नहीं है। हमारे यहां इस सूचकांक में सालों से खास तब्दीली नहीं आई है। सामाजिक और सांस्कृतिक धरातल पर देखें, तो कई स्तरों पर देश में महिलाओं की स्थिति बेहद खराब है। देश में जब उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण जैसी आर्थिक नीतियां अमल में आईं, तो एक बारगी लगा था कि महिलाओं को भी पुरुषों की तरह हर क्षेत्र में समानता का अवसर मिलेगा। श्रम का फेमिनाइजेशन होगा लेकिन यह भ्रम जल्द टूट गया। बल्कि भूमंडीकरण के दौर के बाद हमारे यहां महिलाओं की स्थिति और बिगड़ी नजर आती है। उदारीकरण का पिछले दो दशकों का तजुर्बा बताता है कि देश में तमाम क्षेत्रों में विकास की प्रक्रिया के दौरान महिलाओं के हिस्से असमानता ही आई है। आंकड़े गवाह हैं कि उदारीकरण के दौर में लाखों महिलाओं के हाथ

से काम छिना है। एनएसएसओ के नवीनतम आंकड़ों के मुताबिक राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली में महिलाओं की रोजगार में हिस्सेदारी महज 9.4 फीसद है। बाकी जगह क्या स्थिति होगी, अंदाजा लगाया जा सकता है। महिलाएं जीवन के हर क्षेत्र में अपनी हिस्सेदारी बढ़ाने के लिए लालायित होती हैं बशर्ते सामाजिक-पारिवारिक परिस्थितियां अनुकूल हों। लेकिन हमारे समाज की पितृसत्तात्मक व्यवस्था में महिलाओं को पुरुषों से कमतर ही समझा जाता है। परिवार और समाज में उनके साथ शुरू से भेदभाव होता है। जबकि कई क्षेत्रों में तो उन्होंने पुरुषों से बेहतर काम किया है।

महिलाएं घर के बाहर काम करना चाहती हैं, लेकिन कार्यस्थल पर उनके लिए जो सुरक्षित माहौल होना चाहिए, वह उन्हें नहीं मिलता। उनके साथ मानसिक और शारीरिक हर तरह की हिंसा का खतरा बना होता है। देश में हर साल महिला हिंसा के लगभग तीस हजार मामले दर्ज होते हैं, जिसकी वजह से उनके मन में असुरक्षा का भाव रहता है। इस मामले में हमारे यहां आंध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में स्थिति सबसे खराब है। लैंगिक समानता के पैमाने पर भारत के पिछड़ने की एक वजह, लिंग अनुपात में असमानता है। हमारे यहां लड़का-लड़की की जन्म दर में अब भी काफी फर्क है। यानी स्त्री-पुरुष के बीच असंतुलन पैदाइश से ही शुरू हो जाता है, जो जीवन पर्यंत बना रहता है। हमारी आर्थिक, सामाजिक नीतियां महिलाओं को सार्वजनिक जीवन में हिस्सेदारी के लिए प्रोत्साहित करने की बजाय हतोत्साहित करती हैं।

राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी और योजनाओं के क्रियान्वयन में नौकरशाही की कोताही लैंगिक समानता के स्तर पर भारत के पिछड़ने की मुख्य वजह है। यह स्थिति सुधर सकती है, बशर्ते सच्चे दिल से कोशिश हो। सबसे पहले समाज में महिलाओं के प्रति हिंसा और अपराध कम करना होगा। उन्हें हर जगह सुरक्षित माहौल देना होगा। सामाजिक शांति होगी, तभी महिलाओं की हर क्षेत्र में भागीदारी बढ़ेगी। इसके अलावा शिक्षा और स्वास्थ्य प्रणाली में भी क्रांतिकारी बदलाव जरूरी हैं। सब महिलाओं तक शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाएं पहुंचे। शिक्षा से महिला अपने अधिकारों को पहचानेगी और अपने लिए समानता की पैरवी करेगी। राजनीति के क्षेत्र में जरूरी हिस्सेदारी से महिलाओं की स्थिति में सुधार हो सकता है, लेकिन इस क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति सबसे ज्यादा खराब है।

देश में अब तक हुए सोलह आम चुनावों के आंकड़े बताते हैं कि संसद में उनकी नुमाइंदगी ज्यादा से ज्यादा ग्यारह फीसद तक रही है। साठ करोड़ से अधिक की महिला आबादी वाले देश में, जहां 38 करोड़ से ज्यादा महिला मतदाता हैं, संसद में उनका यह प्रतिनिधित्व निराशाजनक ही है। कानून बनाने से लेकर देश के लिए नई नीतियां भी संसद से तय होती हैं। संसद में महिलाओं की भागीदारी बढ़ेगी तो न सिर्फ समाज में महिलाओं की स्थिति सुधरेगी, बल्कि पूरे समाज और देश की स्थिति और भी बेहतर होगी। राजनीति में महिलाओं की भागीदारी से ही देश में स्त्री-पुरुष के बीच असमानता में कमी आएगी और लैंगिक समानता का स्तर सुधरेगा। वैश्विक आर्थिक मंच की रिपोर्ट, सरकार और समाज दोनों के लिए आईना है। देखना है कि इस आईने में अपना अक्स देखकर, वे कितना कुछ बदल पाते हैं।

राष्ट्रीय सहारा 08.11.2014

समाज की प्रगति में समान भागीदारी जरूरी

मुद्दा

अंजलि सिन्हा

इस बार अन्तरराष्ट्रीय बालिका दिवस- जो 11 अक्टूबर को मनाया जाता है के मौके पर यूनिसेफ, भारत की तरफ से बेटी के नाम पिता की ओर से एक गीत जारी किया गया। पिताओं की मानसिकता पर केन्द्रित इस गीत में एक सकारात्मक दृश्य प्रस्तुत किया गया है ताकि लड़कियां अपना भविष्य संवार सकें और अपनी पूरी क्षमता विकसित कर सकें। गीत में लड़कियों की अहमियत समझने, उन्हें शिक्षा के जरिए सशक्तिकृत करने, सुरक्षा प्रदान करने और एक मनुष्य होने के नाते उनकी भूमिका उभारने पर जोर दिया गया है। कहा गया कि यह पहल यूनिसेफ की 'एंड वायलेंस कैम्पेन' यानी 'हिंसा समाप्ति मुहिम' का हिस्सा है जो अलग-अलग उम्र समूहों के पुरुषों से संवाद कायम करती है और उन्हें बेटियों के विकास में मदद के लिए प्रेरित करती है।

इसे संयोग ही कहा जाएगा कि यूनिसेफ की तरफ से बेटियों के विकास में पिताओं की भूमिका पर किए गए फोकस के दिनों में ही एक सर्वेक्षण रिपोर्ट साइकोलॉजिकल साइंस जर्नल के अगस्त अंक में प्रकाशित हुई है जो बेटियों की कामयाबी में पिता की भूमिका की बात करती है। इसमें बताया गया है कि जो पुरुष घरेलू कामकाज में हाथ बंटाते हैं, उनकी बेटियां अपने करियर में ज्यादा कामयाब होती हैं। यह शोध कनाडा स्थित यूनिवर्सिटी ऑफ ब्रिटिश कोलम्बिया के शोधकर्ताओं ने किया है। शोध में माता पिता के घरेलू कामकाज के तरीके तथा बच्चों के करियर के चयन का आकलन किया गया है। बताया गया है कि पिता को घर में साफ-सफाई बर्तन, कपड़ा धोते तथा खाना बनाते आदि देख कर बेटियों के मन से लिंगभेद का भय समाप्त होता है और वे अधिक महत्वाकांक्षी बनती हैं। उन्हें लगता है कि महिलाओं का काम पुरुष कर सकते हैं तो पुरुषों का काम महिलायें भी कर सकती हैं यानी काम में कोई विभाजन नहीं।

यद्यपि ऐसे सभी शोध सैम्पल सर्वे होते हैं और उनकी सीमायें होती हैं, फिर भी हम सहज अन्दाजा लगा सकते हैं कि घर के वातावरण का गहरा प्रभाव बच्चों के मन-मस्तिष्क पर पड़ता है। घरेलू कामकाज में पुरुषों की भागीदारी का मसला न सिर्फ उस काम में हाथ बंटा कर बोझ हल्का करने का मसला है बल्कि घरेलू काम के प्रति उनका दृष्टिकोण और मानसिकता भी बताता है। इससे बच्चों के मन में स्त्रियोचित व पुरुषोचित कामों के बीच भेद खत्म होता है तथा समानताबोध विकसित होने की गुंजाइश बनती है।

सामान्यतः समाज में स्त्री और पुरुष की भूमिकाओं को इतना अलग-अलग देखा और माना गया है कि उनमें क्या प्राकृतिक है और क्या सामाजिक, इसका घालमेल हो जाता है। उदाहरण के लिए कई सामाजिक भूमिकाएं जिनके बारे में माना जाता था कि उन्हें महिलाएं नहीं कर पायेंगी, उसे कालान्तर में करके उन्होंने साबित किया कि यह समाज प्रदत्त हुनर है- चाहे वह दफ्तर के बड़े से बड़े अधिकारी का पद हो या हवाई जहाज उड़ाना हो या खेल

का मैदान। उनमें सामाजिक प्रतिबंधों के कारण पर्याप्त अवसरों का न मिलना अलग मसला है। इसी प्रकार मर्दों के लिए समझा जाता था कि वे घर-गृहस्थी, रसोई नही संभाल सकते। समाज और परिवार द्वारा उन्हें यह भूमिकाएं भले नहीं दी गयी या वे करना नहीं चाहें तो अलग बात है किन्तु वे भी सक्षम हो सकते हैं गृहकार्यों में। अगर अपने आसपास नजर दौड़ायें तो ऐसे हाऊस-हसबैंड दिख सकते हैं जिनकी पत्नी नौकरी के लिए बाहर जाती है और वे घर से ही अर्थोपार्जन करते हुए परिवार की अच्छी देखभाल कर लेते हैं।

एक मौके पर जब ब्रिटेन में प्रधानमंत्री पद का चुनाव हो रहा था तो प्रचार के दौरान तथा मीडिया में प्रधानमंत्री की जो छवि बनायी जा रही थी, उसमें सबसे अहम था कि वह कैसे घर में अपनी पत्नी की मदद करते हैं, बच्चे के स्कूल का नाश्ता पैक करते है। इस माध्यम से यह सम्प्रेषित करने का प्रयास किया जा रहा था कि वे कितने संवेदनशील एवं जिम्मेदार व्यक्तित्व हैं। अपने यहां तो अधिकतर बच्चे स्कूल में टिफिन बॉक्स में मां द्वारा पैक किया खाना खाने को अभ्यस्त होते हैं। जो महिलाएं बाहर नौकरी करने नहीं जाती हैं उनके लिए तो यह स्वाभाविक होता है परन्तु जो बाहर काम पर जाती हैं वहां भी लंच बाक्स तैयार करने की जिम्मेदारी स्वाभाविक तौर पर मां की ही समझी जाती है।

यह बात सिर्फ घरेलू कामों के सन्दर्भ में ही नहीं बल्कि घर के भीतर के अन्य व्यवहारों पर भी लागू होती है। आजकल स्त्रीविरोधी विभिन्न हिंसाओं के सन्दर्भ में चर्चा होती है कि यह मसला महज सख्त कानून तथा पुलिसिया चुस्ती से नहीं, बल्कि हिंसा की, प्रभाव तथा सत्ता जमाने की, दूसरों का सम्मान न करने की मानसिकता बदलने से ही हल होगा। लड़के अपने घर-परिवार, नाते रिश्तेदारी में औरत के प्रति असम्मान एवं गैरबराबरीपूर्ण व्यवहार देखते हैं तो उन्हें भी ऐसा करना कहीं से गलत नहीं लगता।

दूसरी बात, औरत को उपभोग की वस्तु समझने की मानसिकता परिवार के अन्दर भी होती है और इस बाजारवादी व्यवस्था में उसे तरह-तरह से मजबूत बनाया जाता है। घर के बाहर की दुनिया भी बच्चों को यही सिखाती है कि स्त्री को इस्तेमाल के नजरिये से देखा जा सकता है। इस उपभोक्तावादी मानसिकता के शिकार महज बच्चे ही नहीं बल्कि पुरुष और स्त्री दोनों होते हैं। शरीर को केन्द्र में रख सोचने की मानसिकता इसी का नतीजा है और खास तौर पर महिलाएं उस पैमाने में फिट होने के लिए या तो तमाम तरह की जुगत करती हैं या हीन भावना की शिकार होती हैं।

दरअसल संकट कथित अच्छी संस्कृति बचाने का नहीं बल्कि उच्चस्तरीय संस्कृति गढ़ने का है। गढ़ने का काम हमेशा सृजनात्मकता के साथ ही सोच और विचारधारा पर निर्भर करता है कि हम क्या और कैसा गढ़ना चाहते हैं। यदि हम पुराने को बचाने की बात करते हुए उसे महिमामंडित भी करते रहे तो उससे भविष्य के समाज की जरूरतें पूरी नहीं होतीं। उच्चस्तरीय मूल्यमान्यता का पैमाना भी बदलता है। किसी जमाने में जाति की शुद्धता बनाये रखना इज्जत की बात हो सकती थी या महिलाओं का पर्दे में रहना कुलीन होने का परिचायक था परंतु आज यह श्रेष्ठता का पैमाना नहीं है।

राष्ट्रीय सहारा 25.10.2014

राजस्थान के पंचायत चुनावों में शैक्षिक योग्यता के मामले पर विवाद गहराया

जनसत्ता ब्यूरो

जयपुर, 30 दिसंबर। राजस्थान के पंचायत चुनावों के लिए रखी गई जरूरी शैक्षणिक योग्यता को लेकर विवाद जारी है। राज्य में सरकार ने इस बार के पंचायत चुनाव लड़ने वालों के लिए न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता का प्रावधान रखा है। इसे एक तबका जायज ठहरा रहा है तो एक वर्ग इसकी मुखालफत कर रहा है। जन संगठनों से जुड़े कई जाने-माने लोगों ने इस प्रावधान का विरोध किया है।

राज्य में आगामी दिनों में होने वाले पंचायत राज संस्थाओं के चुनाव में उम्मीदवार बनने के लिए शैक्षणिक योग्यता को लागू किया गया है। देश के दो पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त जेएम लिंगदोह और एसवाई कुरैशी समेत कई हस्तियों ने मुख्यमंत्री वसुंधरा राजे को पत्र लिखकर शैक्षणिक योग्यता के प्रावधान को वापस लेने की मांग की है। इसमें पूर्व न्यायाधीश राजेंद्र सच्चर, सामाजिक कार्यकर्ता अरुणा राय, निखिल डे समेत कई ने सरकार के अध्यादेश को ग्रामीण जनता के लिए निराशाजनक करार दिया है। शैक्षणिक योग्यता के प्रावधान को असंवैधानिक और अलोकतांत्रिक करार दिया गया है। पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्तों का कहना है कि इस प्रावधान से राजस्थान की ग्रामीण क्षेत्र की 90 फीसद महिलाएं चुनाव लड़ने से वंचित रह जाएंगी। राज्य सरकार ने न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता लागू की है। उसके अनुसार जिला परिषद और पंचायत समिति सदस्य के लिए दसवीं कक्षा पास जरूरी किया गया है। सरपंच बनने के लिए आठवीं कक्षा की योग्यता तय की गई है। आदिवासी इलाकों में सरपंच के लिए योग्यता में छूट देते हुए इसे पांचवीं कक्षा पास होना रखा गया है।

मुख्यमंत्री को लिखे पत्र में कहा गया है कि इससे ग्रामीण क्षेत्र की 80 फीसद आबादी तो चुनाव लड़ने की दावेदारी से ही दूर हो जाएगी। पत्र में 2001 की जनगणना के आंकड़ों का हवाला देते हुए कहा गया है कि ग्रामीण इलाकों में अनुसूचित जाति की आधी आबादी तो साक्षर ही नहीं है। विरोध करने वालों का कहना है कि सरकार के इस कदम से उन वंचित तबकों का भला नहीं हो सकेगा जो स्कूली शिक्षा पाने से रह गए हैं।

पूर्व मुख्यमंत्री अशोक गहलोत ने भी सामाजिक क्षेत्र में काम करने वाले इन लोगों के पत्र को गंभीरता से लेने की सलाह मुख्यमंत्री वसुंधरा राजे को दी है। गहलोत का कहना है कि समाज के विभिन्न क्षेत्रों के इन विशेषज्ञों ने जनगणना के आंकड़ों और अनुभवों के आधार पर तथ्यपरक बात लिखी है। यह कहना जायज है कि नए प्रावधान से 80 फीसद ग्रामीण जनता चुनाव लड़ने से वंचित हो जाएगी।

ऐसा होने से मौजूदा चार हजार से ज्यादा जनप्रतिनिधियों के साथ कई कम पढ़े-लिखे अनुभवी योग्य लोगों का लाभ राजस्थान को नहीं मिल पाएगा। गहलोत ने मुख्यमंत्री से अपील की है कि वे जल्दबाजी में लिए गए फैसले को वापस लें। दूसरी तरफ शैक्षणिक योग्यता लागू करने के समर्थन में कई संस्थाओं और जनप्रतिनिधियों ने सरकार के फैसले को मौजूदा समय के मुताबिक जरूरी भी करार दिया है।

जनसत्ता 31.12.2014

आदर्श गांव बनाना है, तो महिलाओं की मदद लेनी होगी

हो सकता है, पांच साल बाद यानी 2019 को जब राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 150वीं जन्मशती मनाई जाएगी तब आदर्श ग्राम के नक्शे में चमचमाते, स्कूल, अस्पताल, सड़क, सामुदायिक भवन अपना वजूद तो बना लें लेकिन क्या इस योजना से महिलाओं की जिंदगी में कोई गुणात्मक सुधार होगा। क्या पचायतों के स्त्री-विरोधी फरमानों पर प्रतिबंध लगाने में सांसद आदर्श ग्राम योजना कोई मिसाल कायम करेगी। दरअसल, महात्मा गांधी ने भारत को आजाद कराने के लिए महिलाओं को साथ लिया था, उन्हें महिलाओं की ताकत का आभास था, अब सांसदों को तय करना है कि गोद लिए गांव को अगर असल में आदर्श बनाना है, तो उन्हें भी अपने लैंगिक दृष्टिकोण का दायरा बढ़ाना होगा

■ अलका आर्य
वरिष्ठ पत्रकार

नरेन्द्र मोदी की सांसद आदर्श ग्राम योजना क्या एक दिवा:स्वप्न है? अगर इस सवाल को खारिज करने वाली लॉबी के पास अपनी दलीलें हैं, तो अगला सवाल यह उठता है कि सांसद इस योजना को अमल कराने में कितनी गंभीरता दिखाते हैं, और गांवों को आदर्श बनाने की प्रक्रिया में महिलाओं की समस्याओं को कितना तव्वजो देते हैं, व क्या नजरिया अपनाते हैं। कोई भी ग्राम आदर्श तब तक नहीं बन सकता जब तक कि वहां की लड़कियों, महिलाओं को पुरुषों की तरह आगे बढ़ने का माहौल व मौके नहीं प्रदान किए जाएं। सांसद ग्राम आदर्श योजना के तहत एक सांसद को अपने इलाके के एक गांव को गोद लेना है, और उसके विकास के लिए सालाना मिलने वाले पांच करोड़ रुपये के अनुदान में से उस गांव में स्कूल, अस्पताल, सड़क, सामुदायिक भवन व स्वच्छता आदि पर खर्च करना है।

जाहिर है, अगर गांव में स्कूल, अस्पताल, सड़कें होंगी तो उनका इस्तेमाल गांववासी करेंगे। यह एक उदारवादी व मानवाधिकारवादी सोच है। गांवों में सांसद ये सब काम मनेरगा के तहत कराएंगे यानी महिलाओं को रोजगार मिलेगा। मगर ध्यान देने वाला पहलू यह भी है कि मनेरगा के तहत भी लैंगिक श्रम विभाजन है। उनकी शारीरिक क्षमता को कम आंकते हुए गहरी खुदाई का काम उनसे नहीं लिया जाता। वक्त पर भुगतान भी उन्हें नहीं मिलता। आधी आबादी सांसद आदर्श ग्राम योजना से कितनी लाभान्वित होगी, यह एक बहुत बड़ी चुनौती है।

गांव में स्कूल बना दिया तो वहां महिला अध्यापक की नियुक्ति की मांग पर भी ध्यान देना होगा। महिला अध्यापक की नियुक्ति का सीधा संबंध स्कूल में आने वाली लड़कियों की संख्या से है। शिक्षा का अधिकार कानून तो लागू हो गया पर देश में अभी भी कई लाख अध्यापकों की कमी है। दूरदराज के इलाकों में सुरक्षा व सार्वजनिक परिवहन की भरोसेमंद व्यवस्था नहीं होने के कारण अधिकतर सरकारी महिला अध्यापक अपने पेशे के प्रति उदासीन नजर आती हैं। अभिभावक अपनी लड़कियों को प्राइमरी की शिक्षा के बाद हाई स्कूल की शिक्षा के लिए दूसरे गांवों में स्थित स्कूलों में भेजने से हिचकिचाते हैं। मुद्दा उनकी सुरक्षा का ही है।

मिले महिलाओं को आगे बढ़ने का परिवेश

कई राज्यों ने लड़कियों को गांव व स्कूल के बीच का फासला पाटने के लिए मुफ्त साइकिलें तो दे दीं पर रास्ते में उनकी सुरक्षा के लिए कोई बंदोबस्त नहीं किए। मैंने कई मर्तबा देश के कई राज्यों के दूरदराज इलाकों में रिपोर्टिंग के दौरान स्कूली लड़कियों को वर्दी पहने सुनसान, जोखिम भरे रास्तों में स्कूल से घर व घर से स्कूल जाते देखा है। कभी भी कहीं किसी पीसीआर वैन को इन मार्गों में स्कूली घंटों के दौरान गश्त करते नहीं देखा।

अस्पताल का ढांचा खड़ा करने के साथ ही वहां यह भी सुनिश्चित करना होगा कि महिलाओं का इलाज करते वक्त कोई लापरवाही नहीं बरती जाए। ग्रामीण महिलाओं को सरकारी योजनाओं की सही जानकारी नहीं होती। इसका फायदा सरकारी स्वास्थ्य अधिकारी से लेकर आशा वर्कर तक उठाती हैं। छत्तीसगढ़ के एक नसबंदी कैंप में 13 महिलाओं की मौत इसका ताजा उदाहरण है। सामुदायिक भवन का इस्तेमाल महिलाएं तभी करेंगी, जब गांव में महिलाओं को आगे बढ़ने वाला परिवेश मिलेगा।

पारंपारिक चौपाल में महिलाएं नदारद व पुरुषों का कब्जा बरकरार है। जकड़न वाला सामाजिक ताना-बाना ह्रदय में तो टीस पैदा करता ही है, पर यह सवाल भी परेशान करता है कि आखिर, कब तक महिलाएं यह नाइंसाफी सहती रहेंगी। अब सवाल यह है कि क्या सांसद के पास इतना वक्त व नजरिया होगा कि वह गांव में बसने वाली आधी आबादी से नियमित संवाद स्थापित कर उनकी समस्याओं को सुने व उनके निराकरण की दिशा में आगे बढ़े।

गांव बना नजीर

हरियाणा में एक गांव है-बीबीपुर। वहां 0-6 आयुवर्ग में लड़कों के मुकाबले लड़कियों की संख्या बहुत कम थी। पर वहां के युवा सरपंच की प्रतिबद्धता ने इस गांव को एक नजीर में बदल दिया। वहां सेक्स रेशो में ही सुधार नहीं हुआ बल्कि वहां एक पुस्तकालय भी बनाया गया है, एक मार्ग का नाम भी लाडो रख दिया गया है। कन्या भ्रूण हत्या के प्रति भी सांसद को संवदेनशील नजर आना होगा और इसके लिए अतिरिक्त प्रयास करने से ठोस नतीजे मिल सकते हैं।

हो सकता है, पांच साल बाद यानी 2019 को जब राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 150वीं जन्मशती मनाई जाएगी तब आदर्श ग्राम के नक्शे में चमचमाते, स्कूल, अस्पताल, सड़क, सामुदायिक भवन अपना वजूद तो बना लें लेकिन क्या इस योजना से महिलाओं की जिंदगी में कोई गुणात्मक सुधार होगा। क्या पचायतों के स्त्री-विरोधी फरमानों पर प्रतिबंध लगाने में सांसद आदर्श ग्राम योजना कोई मिसाल कायम करेगी। दरअसल, महात्मा गांधी ने भारत को आजाद कराने के लिए महिलाओं को साथ लिया था, उन्हें महिलाओं की ताकत का आभास था, अब सांसदों को तय करना है कि गोद लिए गांव को अगर असल में आदर्श बनाना है, तो उन्हें भी महिलाओं की मदद लेनी होगी व अपने लैंगिक दृष्टिकोण का दायरा बढ़ाना होगा।

इस आदर्श ग्राम योजना को पार्टी विचारधारा तक सीमित रखने या सरकारी काम मानने से कुछ नहीं हासिल होने वाला। समावेशी विकास में वंचित तबकों, महिलाओं को उनका हिस्सा नहीं मिला है, सांसदों को सांसद ग्राम आदर्श योजना के क्रियान्वयन में यह तथ्य ध्यान में रखना होगा। ■

राष्ट्रीय सहारा 13.12.2014

हर सांसद 2016 तक एक गांव करे विकसित : मोदी

सांसद आदर्श ग्राम योजना से 'वाइरल' की तरह फैलेगी गांवों के विकास की ललक

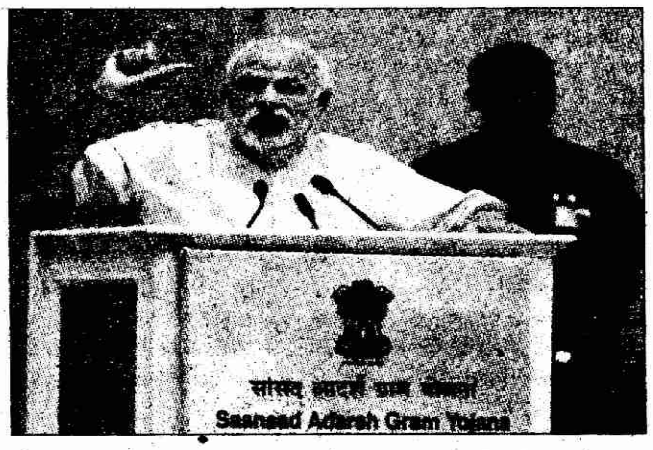

हम करीब 800 सांसद हैं। अगर हममें से प्रत्येक 2019 से पहले तीन गांव का विकास करता है, हम तकरीबन 2500 गांवों का विकास करेंगे

नई दिल्ली (एसएनबी)। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने देश के गांवों को विकसित करने के लिए 'सांसद आदर्श ग्राम योजना (एसएजीवाई) का शनिवार को शुभारंभ किया और कहा कि यह योजना अपनी सकारात्मक राजनीति के चलते देशभर के गांवों में विकास की ललक को 'वाइरल' की तेजी से फैलाएगी।

योजना का शुभारंभ करते हुए उन्होंने कहा कि इसके तहत यह लक्ष्य रखा गया है कि 2016 तक प्रत्येक सांसद की अगुआई में एक गांव और 2019 तक तीन गांवों का विकास किया जाए। इस अवसर पर विकास के तरीकों को लेकर चल रही बहस पर उन्होंने कहा, 'लंबे समय से एक बहस जारी है। बहस यह है कि विकास ऊपर से नीचे की ओर होना चाहिए या नीचे से ऊपर की ओर। बहस से फायदा होता है, लेकिन जो लोग काम में लगे हैं, उन्हें कहीं से तो शुरू करना होगा। नीचे से ऊपर या ऊपर से नीचे विकास शुरू करने की बहस अकादमिक जगत में चलती रहेगी।' उन्होंने कहा, 'हम काम करना चाहते हैं। हम देखना चाहते हैं कि क्या सार्वजनिक भागीदारी से हम बदलाव ला सकते हैं मैं यह दावा नहीं कर रहा हूं कि मैं अचानक स्थिति

- **2019 तक हर सांसद से तीन गांवों को विकसित करने का आग्रह किया प्रधानमंत्री ने**
- **मोदी विकास के लिए वाराणसी का एक गांव चुनेंगे**
- **अपना या अपने ससुराल के गांव का चयन नहीं कर सकेंगे सांसद**

बदल दूंगा यह योजना अंतिम नहीं है। समय के साथ इसमें परिवर्तन और सुधार आएंगे।'

लोक नायक जयप्रकाश नारायण की जयंती के अवसर पर इस परियोजना का शुभारंभ करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि इसका उद्देश्य गांवों में रहने वाले लोगों को उन्नत बुनियादी सुविधाएं और बेहतर अवसर मुहैया कराना है। प्रधानमंत्री ने कहा, 'हम लगभग 800 सांसद हैं। अगर हममें से प्रत्येक 2019 से पहले तीन गांव का विकास करता है, हम तकरीबन 2500 गांव तक ऐसा कर सकेंगे। अगर इस योजना की रोशनी में राज्य भी अपने विधायकों के लिए ऐसी योजना बनाते हैं तो इसमें छह से सात हजार गांव और जुड़ सकते हैं।' प्रधानमंत्री के अनुसार अगर एक ब्लाक में एक गांव विकसित होता है तो इसका असर 'वाइरल' की तरह फैलेगा और विकास की ललक अन्य गांवों को भी आकर्षित करेगी।

प्रधानमंत्री ने कहा, 'मुझे भी वाराणसी में एक गांव चुनना है। उन्होंने कहा कि इस संबंध में वह वहां जाकर चर्चा करेंगे और गांव को चुनेंगे। उन्होंने कहा, इस योजना के जरिए ऐसा माहौल बनाया जाना चाहिए, जिससे कि हर व्यक्ति अपने गांव के लिए गर्व महसूस करे।'

राष्ट्रीय सहारा 12.10.2014

यौन हिंसा की शिकार बेटियां

यों तो दुनिया भर में महिलाओं के खिलाफ यौन हिंसा की घटनाएं होती हैं, लेकिन हमारे देश की स्थिति बेहद भयावह है।

43 % यौन हिंसा पीड़ित लड़कियां 19 वर्ष या उससे पहले होती हैं शिकार

20 % भ्रूण या महीने भर के नवजात गर्भ के दौरान हिंसा के कारण मर जाते हैं उत्तर प्रदेश में

77 % किशोर (15 से 19 वर्ष) लड़कियां देश में पति या साथी की यौन हिंसा की शिकार

10 % फीसदी लड़कियों को दुनिया भर में 20 वर्ष से पहले जबरन यौन हिंसा का शिकार होना पड़ता है

दुनिया में दस में से छह लड़कियां दो से 14 वर्ष की उम्र के दौरान होती हैं शारीरिक हिंसा की शिकार

सोत - यूनिसेफ

यदि गर्भ के दौरान पति की हिंसा से महिलाओं को बचाया जाए, तो गर्भपात या नवजात बच्चे की मौत को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

अमर उजाला 03.10.2014

यह असमानता दूर हो

वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम की रिपोर्ट बताती है कि भारत में लैंगिक असमानता बढ़ी है। लैंगिक समानता सूचकांक में भारत 13 स्थान लुढ़ककर अब 114वें स्थान पर पहुंच गया है। आखिर किन क्षेत्रों में असमानता कम करने की ज्यादा जरूरत है?

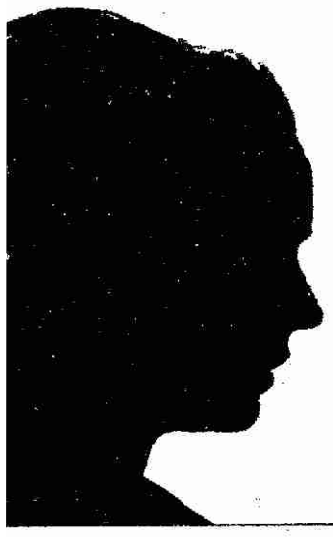

रोजगार
25.51%
महिलाओं की हिस्सेदारी

साक्षरता दर
65.46%
(पुरुषों की साक्षरता दर 82.14%)

मातृत्व मृत्यु दर
190
मौत 1 लाख बच्चे के जन्म पर

राजनीतिक हिस्सेदारी
11.23%
महिला सांसद 16वीं लोकसभा में

महिलाओं के पिछड़ने की वजह देश की सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थिति भी है, जिसमें लड़कों को ज्यादा महत्व दिया जाता है। मगर चुनिंदा क्षेत्रों में ही यदि महिलाओं को सशक्त बनाने के ठोस प्रयास हों, तो हालात बदल सकते हैं।

आंकड़े- विश्व बैंक, जनगणना- 2011

अमर उजाला 30.10.2014

बच्चों से यह सुलूक

बंगलूरू में बच्चों के साथ एक के बाद एक हो रही यौन उत्पीड़न की घटनाएं हमारे समाज पर कलंक की तरह हैं। आंकड़े भी बताते हैं कि भारत बच्चों के लिए दूसरा सबसे बड़ा खतरनाक देश बन गया है।

8,945 बच्चे हर वर्ष होते हैं गायब

53% से ज्यादा बच्चे यौन शोषण का शिकार

20 लाख यौनकर्मी पांच से पंद्रह वर्ष की उम्र के

30.6 लाख बच्चे घरेलू कामगार, जिनमें से **40%** बच्चों का यौन उत्पीड़न

5 लाख बच्चों का हर वर्ष होता है व्यापार

34 अरब डॉलर का सालाना बाल व्यापार

यौन अपराध से बच्चों का संरक्षण अधिनियम सहित भारतीय दंड संहिता में कई ऐसे प्रावधान हैं, जो दोषियों पर सख्त कार्रवाई की वकालत करते हैं। बावजूद इसके अपने देश में बच्चों के यौन उत्पीड़न के मामले रुक नहीं रहे हैं।

आंकड़े- क्राई, द ग्लोबल मार्च एगैंस्ट चाइल्ड लेबर

अमर उजाला 03.11.2014

गुमशुदा बच्चों में ज्यादातर लड़कियां

पिछले दिनों दिल्ली में गायब हुई एक बच्ची एक सप्ताह बाद मिल गई है, लेकिन देश के बहुत सारे बच्चे ऐसे हैं, जिनका वर्षों तक कोई पता नहीं चलता है।

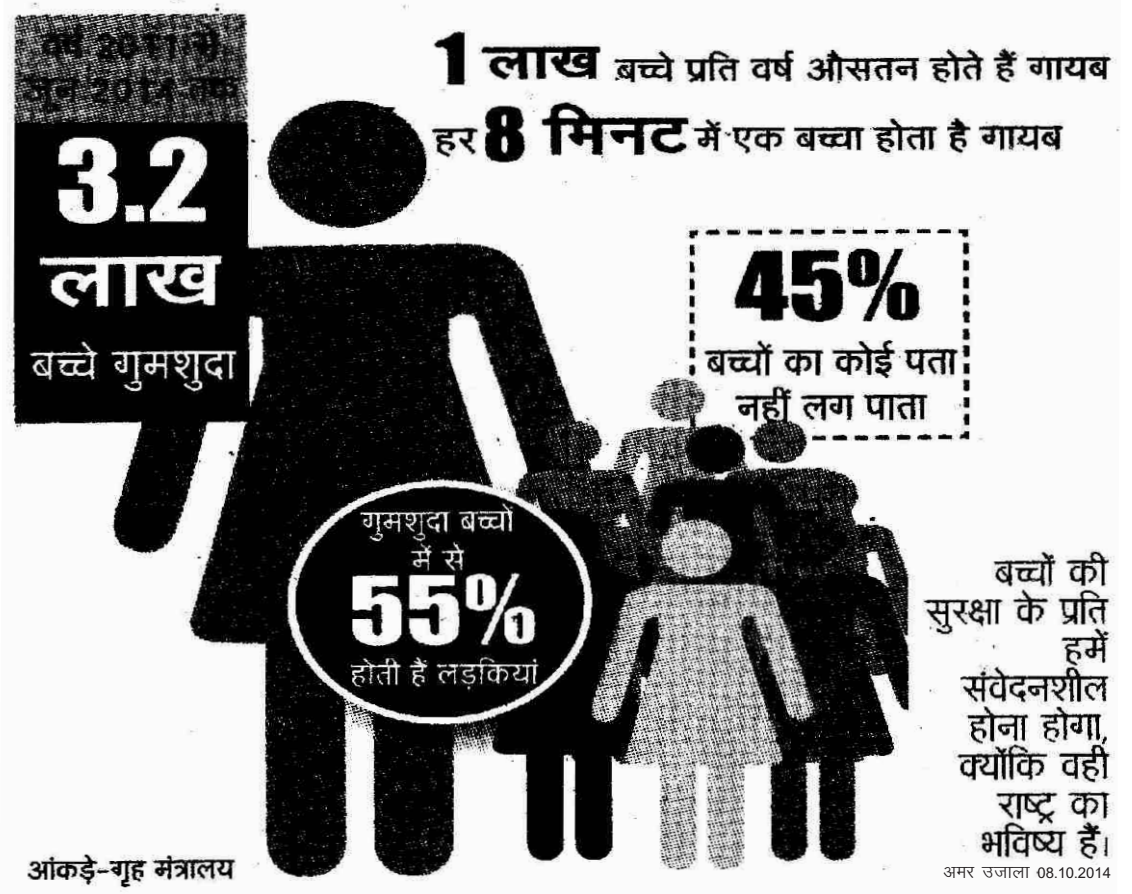

बच्चों की सुरक्षा के प्रति हमें संवेदनशील होना होगा, क्योंकि वही राष्ट्र का भविष्य हैं।

अमर उजाला 08.10.2014

जननी सुरक्षा अभी बाकी

हमारे देश में मातृत्व मृत्यु दर में कमी आई है, लेकिन अब भी भारत में सबसे ज्यादा जननी की मौत होती है।

2013 में जहां सबसे ज्यादा हुई प्रसव के दौरान जननी की मौत

देश	मातृत्व मृत्यु	वैश्विक हिस्सेदारी
भारत	50,000	17%
नाइजीरिया	40,000	14%
कांगो	21,000	7%
इथोपिया	13,000	4%
इंडोनेशिया	8,800	3%
पाकिस्तान	7,900	3%

45% मातृत्व मृत्यु दर में वैश्विक गिरावट (1990 से 2013 के दौरान)

65% मातृत्व मृत्यु दर में भारत में गिरावट (1990 से 2013 के दौरान)

2.89 लाख महिलाओं की मृत्यु हुई 2013 में दुनिया भर में

अशिक्षा एवं कम उम्र में लड़कियों की शादी के कारण भारत में मातृत्व मृत्यु दर ज्यादा है। सहस्राब्दि लक्ष्य को हासिल करने के लिए मातृत्व मृत्यु दर को 103 पर लाने की जरूरत है।

आंकड़े- विश्व स्वास्थ्य संगठन

अमर उजाला 02.12.2014

हत्या में मान कहां

शादी के मात्र तीन दिनों के बाद ही दिल्ली में एक युवती की इज्जत के नाम पर हत्या कर दी गई। ऐसी घटनाएं निरंतर बढ़ती ही जा रही हैं।

5,000 हत्याएं दुनिया में हर वर्ष इज्जत के नाम पर होती हैं

05 में से एक मान हत्या का मामला भारत में

12 ऑनर किलिंग होती है ब्रिटेन में प्रति वर्ष

1,000 ऑनर किलिंग्स के मामले हर वर्ष भारत में

2,549 हत्याएं हुई देश में प्रेम संबंधों के कारण 2012 में

90 फीसदी मामले हरियाणा, पंजाब और उत्तर प्रदेश में

समाज का एक तबका आज भी उन्हीं रूढ़िवादी रिवाजों से चिपका है, जो निजी स्वतंत्रता को कुछ नहीं मानता। जब हमने युवाओं को रोजगार एवं सरकार चुनने की आजादी दी है, तो जीवन साथी चुनने की आजादी क्यों नहीं?

आंकड़े: यूएन, एनसीआरबी और एडीडब्ल्यूए

अमर उजाला 21.11.2014

बच्चों की सेहत बिगाड़ रहा है खुले में शौच

एक नए शोध के आने के बाद, जिसका यह निष्कर्ष था कि साफ-सफाई में लापरवाही भी बच्चों में कुपोषण बढ़ाती है, यूनिसेफ ने विगत सोमवार को नई दिल्ली में तीन दिनों के एक सम्मेलन की शुरुआत की है। यह कांफ्रेंस लोगों में स्वच्छता के प्रति जागरूकता फैलाने के उद्देश्य से आयोजित की गई है, ताकि बच्चों को अपूर्ण शारीरिक विकास जैसी समस्याओं से बचाया जा सके।

यूनिसेफ की उप-कार्यकारी निदेशक गीता राव गुप्ता ने सम्मेलन की शुरुआत करते हुए बताया कि 1960 के दशक में किस तरह उनका बचपन दिल्ली में बीता और कैसे उस दौर में वह बिना जूते पहने ही पड़ोस के मैदान में क्रिकेट खेलती थीं, जहां बगल में ही ग्वालों और चरवाहों की शौचालयविहीन बस्ती थी। खेल के दौरान वह अक्सर घासों पर दौड़ती थी, जो मानव अपशिष्ट से भरे होते थे। उन्होंनें कहा, 'शायद इसलिए मैं काफी पतली थी और कुपोषित दिखती थी, जो मेरी मां के लिए चिंता का एक बड़ा कारण था।'

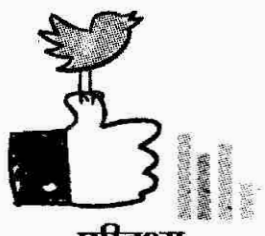

परिदृश्य

बच्चों की करीब आधी आबादी के शारीरिक विकास के अवरुद्ध होने का यह एक महत्वपूर्ण कारण है।

गार्डनर हैरिस

भारत की आबादी का आधा हिस्सा या कम से कम 62 करोड़ लोग खुले में शौच करते हैं। और हालिया शोध यह बताता है कि बच्चों की करीब आधी आबादी के शारीरिक विकास के अवरुद्ध होने का यह बड़ा कारण हो सकता है। हालांकि कई शोधकर्ता इससे सहमत हैं कि असंतुलित आहार और खानपान की आदतें भी भारत में कुपोषण के लिए जिम्मेदार हैं, पर कइयों का यह मानना है कि गंदगी कुपोषण के महत्वपूर्ण कारकों में एक हो सकता है। इसकी वजह यह है कि मानव और पशुओं के मल से जीवाणु संबंधी ऐसा संक्रमण फैलता है, जो बच्चों में पोषक तत्व अवशोषित करने की क्षमता को कमजोर कर देता है।

हार्वर्ड यूनिवर्सिटी में पॉपुलेशन हेल्थ के प्रोफेसर डॉ एस वी सुब्रमण्यम ने खुलासा किया है कि यह समस्या गरीब घरों में ही नहीं, संपन्न तबकों के बच्चों में भी है। इसकी वजह यह है कि बेशक संपन्न घरों में शौचालय की सुविधा होती है, पर उनके आसपास के विपन्न घरों में ऐसा नहीं होता। नतीजतन मक्खियों और पानी के माध्यम से वह भी इस बैक्टीरिया से संक्रमित होते हैं। इसलिए सुब्रमण्यम कहते हैं, 'आपके घर में शौचालय का होना भी आपकी सुरक्षा की गारंटी नहीं है।'

बौनेपन की वजह से बच्चा शारीरिक और मानसिक रूप से कमजोर होता है। दुनिया भर में शारीरिक रूप से अपूर्ण बच्चों में से 40 फीसदी बच्चे दक्षिण एशिया में हैं। दक्षिण एशिया में अपेक्षाकृत कम शौचालय और दुनिया के अन्य भागों की तुलना में यहां जनसंख्या का घनत्व काफी ज्यादा होना इसके कारण हो सकते हैं। दक्षिण एशिया में यूनिसेफ की क्षेत्रीय निदेशक कैरिन हल्शॉफ कहती हैं, अगर हमने खुले में शौच करना बंद नहीं किया, तो इसका कोई मतलब नहीं रह जाएगा कि बच्चों को कितना भोजन दिया जाए, क्योंकि उनका विकास अवरुद्ध ही रहेगा।'

हालांकि दिल्ली विश्वविद्यालय में दिल्ली स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स से जुड़े डॉ डीन स्पीयर्स काफी आशान्वित हैं। उनकी मानें, तो वक्त तेजी से बदल रहा है। वाकई पांच वर्ष पहले तक कुपोषण पर होने वाली बहसों में गंदगी की समस्या बमुश्किल ही शामिल होती थी, मगर अब हम इसके बारे में बात करने लगे हैं। और यह निश्चय ही भविष्य के लिए सुखद संकेत है।

अमर उजाला 12.11.2014

© 2014 The New York Times news and syndicate

ज्यादातर स्कूलों में लड़कियों के शौचालय इस्तेमाल योग्य नहीं

नई दिल्ली, 7 अक्तूबर (भाषा)। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की स्कूलों में लड़कियों के लिए शौचालय बनाने की पहल के बीच देश के आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, झारखंड, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओड़िशा, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में बड़ी संख्या में स्कूलों में लड़कियों के लिए शौचालय इस्तेमाल योग्य नहीं हैं और बेकार पड़े हैं। शौचालय सुविधा का नहीं होना लड़कियों के स्कूल की पढ़ाई बीच में ही छोड़ने का एक अहम कारण है।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय के आंकड़ों के मुताबिक आंध्र प्रदेश के 45714 स्कूलों में से 8329 में लड़कियों के लिए बने शौचालय इस्तेमाल योग्य नहीं हैं जबकि असम के 50,186 में से 3956 स्कूलों में ऐसी स्थिति है। बिहार के 70673 स्कूलों में से 9225 स्कूलों में लड़कियों के लिए बने शौचालय इस्तेमाल योग्य नहीं हैं, वहीं झारखंड के 40,666 स्कूलों में 3979 स्कूलों में यह हाल है।

सरकारी आंकड़ों के मुताबिक मध्य प्रदेश के 114444 स्कूलों में से 9271 में लड़कियों के लिए बनाए गए शौचालय बेकार पड़े हैं जबकि महाराष्ट्र के 67307 में से 2190 स्कूलों में शौचालय इस्तेमाल योग्य नहीं हैं। ओड़िशा के 58412 स्कूलों में से 12520 स्कूलों, राजस्थान के 83564 में से 2990 स्कूलों और तमिलनाडु के 37002 में 958 स्कूलों में लड़कियों के लिए बने शौचालय इस्तेमाल योग्य नहीं हैं। उत्तर प्रदेश के 160763 में से 5971 स्कूलों में लड़कियों के लिए बने शौचालय इस्तेमाल योग्य नहीं हैं जबकि पश्चिम बंगाल के 81915 स्कूलों में से 9087 में ऐसी स्थिति है।

स्कूलों में लड़कियों के लिए शौचालय के अभाव की स्थिति पर गहरी चिंता जताते हुए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 15 अगस्त को ऐतिहासिक लालकिले की प्राचीर से सांसदों और कारपोरेट क्षेत्र का आह्वान करते हुए अगले साल तक देश भर में स्कूलों में लड़कियों के लिए अलग से शौचालयों के निर्माण में मदद करने की अपील की थी। देश के करीब 19 फीसद स्कूलों में लड़कियों के लिए अलग शौचालय नहीं है। लेकिन 95 फीसद स्कूलों में पेयजल सुविधा उपलब्ध है।

आंकड़ों के मुताबिक आंध्र प्रदेश के 45714 स्कूलों में से 9114 में लड़कियों के लिए अलग शौचालय उपलब्ध नहीं हैं। असम के 50186 में से 6890 स्कूलों और बिहार के 70,673 में 17982 स्कूलों में लड़कियों के लिए अलग शौचालय नहीं है। गुजरात के 33713 स्कूलों में केवल 87 स्कूलों और कर्नाटक के 46421 में से मात्र 12 स्कूलों में लड़कियों के लिए अलग शौचालय नहीं है। मध्य प्रदेश के 1,14,444 स्कूलों में से 9130 और ओड़िशा के 58,412 में से 8196 स्कूलों में लड़कियों के लिए अलग शौचालय की व्यवस्था नहीं है। तमिलनाडु के 37002 स्कूलों में से 1442 में और पश्चिम बंगाल के 81915 स्कूलों में से 13608 स्कूलों में लड़कियों के लिए अलग शौचालय नहीं है। चंडीगढ़, दमन दीव, दिल्ली, लक्षद्वीप, पांडिचेरी में स्कूलों में लड़कियों के लिए अलग शौचालय की व्यवस्था है।

जनसत्ता 08.10.2014

एक करोड़ परिवारों के लिए बनेंगे शौचालय

स्वच्छ भारत मिशनः कार्यक्रम को लागू करने के लिए दिशानिर्देश जारी

अमर उजाला ब्यूरो

नई दिल्ली। देश के 4041 शहरों में स्वच्छ भारत मिशन कार्यक्रम को लागू करने के लिए केंद्र ने राज्यों और स्थानीय निकायों को सशक्त बनाने का फैसला लिया है। वे स्वच्छता मिशन से जुड़े प्रस्तावों को मंजूर करने या प्रस्तावों को पेश करने के लिए स्वतंत्र होंगे। सरकार ने मिशन के तहत एक करोड़ परिवारों के लिए शौचालय, 2 करोड़ 52 लाख सामुदायिक शौचालय और ढाई करोड़ से अधिक सार्वजनिक शौचालय बनाने का लक्ष्य रखा है।

परियोजना की कुल लागत 62,009 करोड़ रुपये रखी गई है। मिशन के तहत केंद्र और राज्यों के बीच खर्च का बंटवारा 75 और 25 के अनुपात में होगा। पूर्वोत्तर और विशेष दर्जा प्राप्त राज्यों को महज 10 फीसदी खर्च करने का प्रस्ताव किया गया है। योजना के तहत 42,512 करोड़ रुपये के निजी निवेश का लक्ष्य भी है।

62,009 करोड़ रुपये होंगे खर्च, 42,512 करोड़ के निजी निवेश का लक्ष्य

मुंबई में डब्बेवालों ने की सफाई

मुंबई। स्वच्छ भारत अभियान के तहत पीएम नरेंद्र मोदी द्वारा ब्रांड एंबेसडर बनाने के एक दिन बाद शुक्रवार को डब्बेवालों ने उपनगरीय इलाकों में सफाई की। मुंबई की भागती जिंदगी में लोगों तक टिफिन पहुंचाने वाले इन डब्बेवालों ने स्वच्छता मिशन को अंजाम देने के लिए एक टीम बनाई है। उन्होंने अंधेरी और लेवर पार्ले इलाके में सड़कों की सफाई की। एजेंसी

शहरी विकास मंत्री वेंकैया नायडू ने दिशानिर्देश जारी करते हुए कहा कि शहरी स्थानीय निकाय प्रत्येक घर में शौचालय, सामुदायिक या सार्वजनिक शौचालय निर्माण संबंधी परियोजनाएं तैयार करने, मंजूर करने या लागू करने के लिए अधिकृत होंगे। जल्द ही इस संबंध में निकायों को विस्तृत निर्देश जारी किए जाएंगे। वहीं राज्यों को निकायों के ठोस कचरा प्रबंधन संबंधी प्रस्ताव मंजूर करने की स्वतंत्रता होगी। मिशन के तहत सार्वजनिक शौचालयों को बाजार, रेलवे स्टेशन, पर्यटक स्थल, ऑफिस कांप्लेक्स के इर्द-गिर्द बनाने का प्रस्ताव किया गया है। शौचालय निर्माण का लाभ खासतौर पर अनाधिकृत कालोनियों, झुग्गी झोपड़ियों को देने के लिए कहा गया है। सरकार ने प्रत्येक चरण में निगरानी के लिए समिति गठन का भी प्रस्ताव भी किया है। नायडू ने कहा है कि इस तरह मिशन के कार्यान्वयन से तय समय सीमा में स्वच्छता मिशन को पूरा किया जा सकता है।

अमर उजाला 27.12.2014

विश्व शौचालय दिवस पर उत्तर भारत में चुनौतियों की बानगी

भारत में करीब 60 करोड़ लोग करते हैं खुले में शौच

अमर उजाला नेटवर्क

वाराणसी/चंडीगढ़/शिमला/गाजियाबाद। बुधवार को विश्व शौचालय दिवस पर संयुक्त राष्ट्र ने अपनी रिपोर्ट जारी करते हुए बताया है कि दुनिया में खुले में शौच करने वाले सबसे ज्यादा लोग भारत में हैं। रिपोर्ट के मुताबिक देश की कुल आबादी के 47 प्रतिशत लोग यानी 59.7 करोड़ लोग खुले में शौच करते हैं। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भी इस चुनौती को स्वीकार किया है। अमर उजाला ने जब उत्तर भारत में जब हकीकत जानने की कोशिश की तो चौंकाने वाली तस्वीर दिखाई दी।

स्वयं पीएम के संसदीय क्षेत्र वाराणसी के आसपास के इलाकों में 30 से 60 फीसदी तक घरों में शौचालय नहीं हैं। दूसरी तरफ पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश में भी हालात काफी चुनौतीपूर्ण हैं। पंजाब में 1288 सरकारी स्कूल ऐसे हैं जिनमें शौचालय नहीं हैं, इनमें लड़कियों के 743 स्कूल शामिल हैं। हरियाणा में 20 फीसदी बालिका विद्यालयों में शौचालय नहीं हैं। यूपी में निर्मल गांव का पुरस्कार हासिल करने वाले गाजियाबाद जनपद में 12 हजार घरों के भीतर शौचालय नहीं हैं, जबकि जिले के 46 स्कूल भी शौचालय से महरूम हैं। हिमाचल प्रदेश में आज भी डेढ़ लाख से ज्यादा परिवार खुले में शौच करने को मजबूर हैं। केंद्र और राज्य सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाएं इन तक नहीं पहुंच पाई हैं। यहां के चार प्रतिशत स्कूलों में भी शौचालय नहीं हैं।

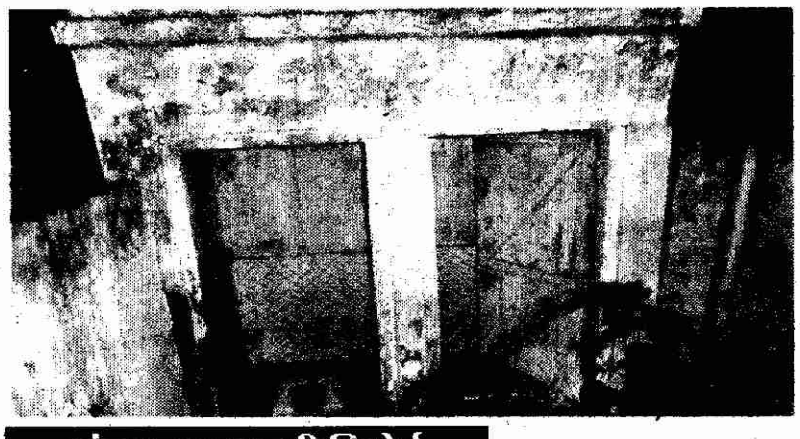

संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट

- पीएम मोदी के प्रयास के बाद भी भारत में सबसे ज्यादा लोग खुले में शौच जाते हैं
- भारत में 59.7 करोड़; जबकि दुनिया के एक अरब लोग खुले में शौच को मजबूर
- लड़कियां स्कूल छोड़ रही हैं और महिलाओं के यौन शोषण का खतरा भी कहीं ज्यादा
- भारत में यूनीसेफ भी गंदगी के खतरे से लोगों को जागरूक करने का प्रयास कर रहा है
- भारत के अलावा नाइजीरिया, इथियोपियां, सूडान में भी शौचालय काफी कम

प्रधानमंत्री का संसदीय इलाका

वाराणसी और आसपास की स्थिति

- गाजीपुर जिले के करीब 49 फीसदी लोगों के पास अपना शौचालय ही नहीं है। स्कूलों में भी शौचालयों की दशा काफी खराब है।
- भदोही जिले के 40 फीसदी घरों में शौचालय हैं लेकिन 60 फीसदी लोग आज भी शौच के लिए खेतों का रुख करते हैं।
- मऊ के ग्रामीण इलाकों में 60% घरों में शौचालय नहीं हैं। सरकारी स्कूलों के शौचालय इस लायक नहीं कि उनका उपयोग संभव हो।
- चंदौली में गांव की अपेक्षा शहर में हालात ज्यादा खराब हैं, कहीं दरवाजे टूटे पड़े हैं तो कहीं गंदगी भरी पड़ी है।
- मिर्जापुर में भी 30 प्रतिशत लोग शौचालयों से महरूम हैं। गांवों के 30 फीसदी शौचालय जर्जर स्थिति में हैं।

खुले में शौच के मामले में देशों का स्थान

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी हर स्कूल में शौचालय का ऐलान कर चुके हैं। लेकिन हालात इतनी जल्दी सुधरने वाले नहीं हैं। जिन स्कूलों में शौचालय है भी यहां बदहाली के चलते उसे इस्तेमाल करना काफी मुश्किल है।

दुनिया	- करीब एक अरब
भारत	- 59.7 करोड़
इंडोनेशिया	- 5.4 करोड़
पाकिस्तान	- 4.1 करोड़
नेपाल	- 1.1 करोड़
चीन	- एक करोड़

अमर उजाला 20.11.2014

शौचालय बना देना भर नहीं काफी

■ वी. कुरियन बेबी

कंट्री डायरेक्टर, आईआरसी वॉश, स्वीडन

स्वच्छता दिवस पर अपने संबोधन में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने परंपरा से हटते हुए स्वच्छता से सरोकार को अपने भाषण के केंद्र में रखा। इसे अपनी राजनीतिक प्राथमिकता बताया। और अब 'स्वच्छ भारत' अभियान का आगाज किया है, ताकि 2019 तक देश को खुले में शौच करने की प्रवृत्ति से निजात दिलाई जा सके। खुले में शौच करने वालों की सर्वाधिक संख्या भारत में है। विश्व में 100 करोड़ लोगों को शौचालय-सुविधा हासिल नहीं है। इनमें साठ करोड़ भारतीय हैं। स्वच्छता के मद्देनजर कारगर सेवा न केवल अच्छे स्वास्थ्य बल्कि मानवीय गरिमा, आजीविका, सुरक्षा एवं संरक्षा के लिए भी आवश्यक है। लेकिन वर्षों से स्वच्छता महत्वपूर्ण विकासात्मक प्राथमिकता कभी नहीं रही। राजनेताओं और प्रशासन की बेरुखी और उस पर लोगों में साफ-सफाई को लेकर खास जागरूकता न होने से स्वच्छता संबंधी हालात खासे लचर रहे। समग्र स्वच्छता अभियान और निर्मल भारत अभियान शुरू जरूर किए गए लेकिन केवल कुछ राज्यों में लक्ष्य-प्रेरित ये कार्यक्रम जरूरी साज-सामान की आपूर्ति तक ही सीमित रहे। नतीजा रहा कि शौचालयों का उपयोग करने वालों की संख्या में कोई खास इजाफा नहीं हो पाया।

शौचालयों का निर्माण करा देना नहीं काफी

आईआरसी के शोध से संकेत मिलता है कि केवल शौचालयों का निर्माण करा देने मात्र से ही भारत को स्वच्छता संबंधी अड़चनों से छुटकारा नहीं मिल पाएगा। 'स्वच्छ भारत' की संभावनाओं को मौजूदा राष्ट्रीय कार्यक्रमों और उनकी उपलब्धियों के बीच के अंतर के संदर्भ में सतर्क आशावाद के साथ परखा जाना जरूरी है। पहली बात तो सरसरी तौर पर देखने में यह आती है कि कार्यक्रम शौचालयों के निर्माण के पार जाकर समूची स्वच्छता कड़ी पर ध्यान नहीं दे पा रहे। केरल जैसे राज्यों, जहां स्वच्छता के मद्देनजर अच्छी स्थिति है, में नये उभरे मुद्दों जैसे कि पिट्स के भर जाने के बाद उपचार संबंधी सुविधाओं की कमी के चलते स्वास्थ्य संबंधी गंभीर खतरे पैदा हो गए हैं। दूसरी बात यह कि केवल साज-सामान के लिए सब्सिडी मुहैया कराने पर ही ध्यान दिया जा रहा है। वह भी इस तथ्य के बावजूद कि लाखों शौचालय इस्तेमाल कर सकने लायक नहीं हैं, या लापता हैं। उनके लिए धन का इंतजाम किया गया था, लेकिन वे जहां बनाए गए थे, वहां हैं ही नहीं। तीसरी बात यह कि स्वच्छता कार्यक्रम में पेशेवराना पुट की कमी है। उच्च गुणवत्तापूर्ण प्रबंधन अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन के मद्देनजर आवश्यक है, लेकिन इस तथ्य की अनदेखी की जाती रही है।

'स्वच्छ भारत' अभियान को सफल बनाने के लिए जरूरी है कि अफसरशाहों के साथ ही राजनेताओं की प्राथमिकता में भी यह सर्वोच्च स्थान पर रहे। 'स्वच्छ भारत' को लेकर कोई भी संभावना उसी सूरत में फलीभूत हो पाएगी जब हम साफ-सफाई संबंधी समूची कड़ी पर तवज्जो देंगे

इस सबके बावजूद भारत और अन्य विकासशील देशों में सफलता की अनेक मिसालें भी मिलती हैं, जहां उपयोगी और वांछित समाधान हासिल किए गए। जैसे कि नंदीग्राम ब्लॉक दो (ईस्ट मिदनापुर जिला, प. बंगाल) 1990 के दशक में ही देश का पहला ऐसा ब्लॉक बन गया था, जहां सभी ग्रामीण परिवारों को स्वच्छ शौचालय मुहैया करा दिए गए थे। जिला एवं ब्लॉक स्तर पर बेहतर समन्वय, रामकृष्ण मिशन लोक शिक्षा परिषद की प्रतिबद्धता तथा कारगर तकनीकी सहयोग के चलते बेहतर कार्यान्वयन के कारण यह सफलता हासिल की जा सकी। इस कार्यक्रम को समय से धन मुहैया कराया गया। फिर, राज्य स्वच्छता प्रकोष्ठ ने भी इसकी बराबर निगरानी की। समुदाय को साथ लेने की रणनीति अपनाने के साथ ही मजबूत राजनीतिक समर्थन और समाज के सक्रिय सहयोग जैसी बातों ने लोगों की प्रवृत्ति में बदलाव लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

स्थानीय लोग साथ जरूरी

महाराष्ट्र, गुजरात, तमिलनाडु, केरल और सिक्किम में भी इसी प्रकार की सफलताएं मिली हैं। ये तमाम मॉडल समुदाय-केंद्रित थे, जिन्हें मजबूत और विश्वसनीय स्थानीय नेतृत्व की अगुवाई में अभियान चलाकर सफल बनाया जा सका। वैश्विक स्तर पर सफल रहे स्वच्छता अभियान भी अपनी इन्हीं खासियतों के बल पर सफल रहे। वे मजबूत क्रियान्वयन योजना पर आधारित थे। लोगों के व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए उच्चस्तरीय राजनीतिक नेतृत्व ने कारगर भूमिका निभाई। राष्ट्रीय अस्मिता का भाव जगाया गया। विकेंद्रीकृत और समुदाय-प्रेरित रणनीति अपनाई गई। स्पष्ट, जवाबदेह सांस्थानिक और कारगर समन्वायिक तौर-तरीके आजमाए गए। ऐसे वित्तीय विकल्प अपनाए गए जो लोगों की पहुंच के भीतर थे। फिर, कार्यक्रम पर परिणामोन्मुख निगरानी भी रखी गई।

स्वच्छता की स्थिति में सुधार के लिए जरूरी है कि लोगों में व्यवहारगत बदलाव लाया जाए। स्वच्छता सेवाओं के लिए सतत मांग बनाई जाए। खुले में शौच करने को लेकर समाज के स्तर पर अभी जो स्वीकार्यता है, उसे बदलना होगा। 'स्वच्छ भारत' अभियान में बेहतरीन मार्केटिंग पेशेवरों को लाना होगा। साथ ही, प्रभावी पंचायतीराज संस्थाओं के संजाल का उपयोग भी करना होगा। स्वच्छता के लिए ललक और स्वच्छता संबंधी आदतों को प्रोत्साहित करने के लिए अभियान में मास मीडिया और जनसंपर्क, दोनों ही जरियों से लोगों तक पहुंचना होगा। स्वच्छता कार्यक्रम के सामने जो सबसे बड़ी चुनौती, खासकर ग्रामीण इलाकों में, पेशेवर और प्रबंधकीय समर्थन की कमी के रूप में है। राष्ट्रीय स्वच्छता सेना, जैसे कि 640 जिलों में से प्रत्येक में सौ स्वयंसेवी पेशेवरों की टीम बनाई जानी चाहिए। ये पेशेवर दरपेश समस्या का तत्काल निवारण करने में सक्षम होंगे।

'स्वच्छ भारत' को सफल बनाने की खातिर जरूरी है कि कार्यक्रम राजनेताओं के साथ ही अफसरशाहों की सर्वोच्च प्राथमिकता बने। मेरी कई जिलाधिकारियों के साथ बातचीत हुई तो पता चला कि स्वच्छता राजनेताओं और अफसरशाहों के लिए कभी भी सर्वोच्च प्राथमिकता नहीं रही। सबके लिए एक समान-स्वच्छता समाधान जैसे प्रयासों की बजाय जरूरी है कि भारत में विभिन्न स्थितियों में कारगर समाधान मुहैया कराए जाने पर ध्यान केंद्रित किया जाए। और आखिर में, कहना चाहूंगा कि अभी कॉरपोरेट सोशल रिस्पोंसिबिलिटी भागीदारी का जो ध्यान मात्र धन मुहैया करा भर देने तक ही सीमित है, उसे अतिरिक्त प्रयास करने होंगे। लोगों के व्यवहार में बदलाव लाने की गरज से अपनी भूमिका तलाशनी होगी।

साथ ही, केंद्र और राज्यों को ऐसी समग्र स्वच्छता नीति बनानी चाहिए जिसमें स्वच्छता की समूची श्रृंखला समाहित हो। कानूनी प्रावधान भी किए जाने चाहिए ताकि स्वच्छता संबंधी सेवाएं अधिकार-आधारित बन सकें।

■ (आलेख में व्यक्त विचार लेखक के निजी हैं)

राष्ट्रीय सहारा 11.10.2014

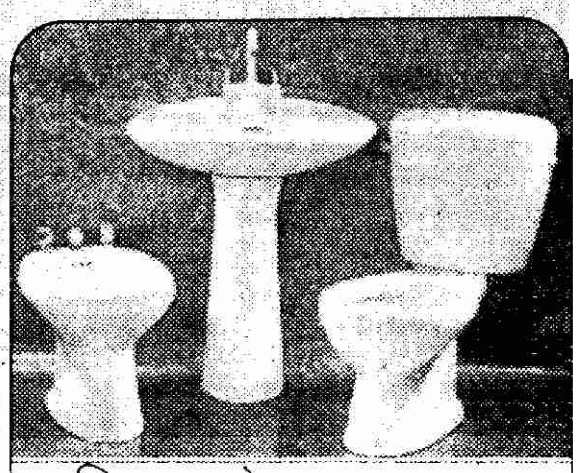

अभियान से बढ़ता बाजार

अभियान से सैनिटरी उद्योग में 15 फीसद बढ़ोतरी की संभावना

- सेरेमिक बाजार-20,000 करोड़ रुपये का
- सेनिटरी वेयर का बाजार 3000 करोड़ रुपये
- ये दोनों वस्तुओं के बाजार सालाना 12 फीसद की दर से बढ़ रहे हैं।

हिन्डवेयर गुजरात में 150 करोड़ की नई इकाई की स्थापना करेगी।

- टाटा कन्सल्टेंसी सर्विस (टीसीएस) और भारती फाउंडेशन अपने सीएसआर फंड का इस्तेमाल करने पर राजी। इनकी देखादेखी अन्य कम्पनियां और संस्थान भी स्वच्छता मिशन में सीएसआर को लगाएंगी।

स्वच्छ भारत अभियान (2014-2019)

मिशन बजट : 1,96,009 करोड़ रुपये

(इसमें ग्रामीण विकास मंत्रालय 1,34,000 करोड़ रुपये की भागीदारी करेगा जबकि 62,009 करोड़ रुपये शहरी विकास मंत्रालय की होगी)

इसमें 25 फीसद खर्च राज्य सरकारें वहन करेंगी। केवल जम्मू-कश्मीर और पूर्वोत्तर के राज्य मात्र 10 फीसद ही राशि का योगदान करेंगे।

- स्वच्छ भारत अभियान को दो भागों में बांटा गया है।
- ग्रामीण इलाकों में स्वच्छ भारत (ग्रामीण) और 4,041 शहरों के लिए स्वच्छ भारत (शहरी) अभियान।
- इसके तहत 66,575 घरों में रोजाना शौचालय बनेंगे ताकि पांच सालों में हरेक घर को शौचालय देने का लक्ष्य पूरा किया जा सके।
- 56,928 और शौचालय ग्रामीण स्कूलों में बनेंगे। साथ ही, देश में हरेक स्कूल या शिक्षा संस्थानों में लड़के-लड़कियों के लिए अलग टायलेट बनेंगे।
- लोगों में स्वच्छता के प्रति नजरिया बदलने का अभियान 31 अक्टूबर तक चलेगा। यह 25 सितम्बर से चलाया जा रहा है।

सर्वाधिक आवंटन

शौचालयों के प्रकार	पहले	अब
निजी	0.10	0.15
स्कूल	0.35	0.54
आंगनवाड़ी	0.80	0.20
समुदाय	2	6

(आंकड़े लाख रुपये में)

- स्वच्छ भारत अभियान में बिल गेट्स फाउंडेशन और फेसबुक को भी शामिल होने का आह्वान किया गया है
- इसके अलावा, देश के धार्मिक-आध्यात्मिक संस्थानों और व्यावसायिक संगठनों से शामिल होने का अनुरोध। बाबा रामदेव, श्रीश्री रविशंकर, गायत्री परिवार, कांची मठ, विशाल हाउस, जमाए-ए-इस्लामी हिंद आदि
- व्यावसायिक संगठन हैं-सीआईआई, फिक्की, एसोचैम
- स्वच्छता को पर्यटन उद्योग से जोड़ा गया है। इसके तहत, देश के 50 पर्यटक शहरों का चयन कर उन्हें साफ-सुथरा किया जाएगा

एक कदम स्वच्छता की ओर

दायरे में : घर, स्कूल, अस्पताल, गलियां, सड़कें, बाजार, सरकारी कार्यालय, कार्यस्थल, रेलवे स्टेशन, बस अड्डे, मूर्तियां, पार्क, स्मारक और अन्य सार्वजनिक स्थल, पर्यटन स्थल, तालाब, झीलें और नदियां आदि

जोर- कचरा निष्पादन प्रबंधन और अपशिष्ट जल प्रबंधन पर

पहले चरण में 500 शहरों/नगरों में यह काम प्राथमिकता पर

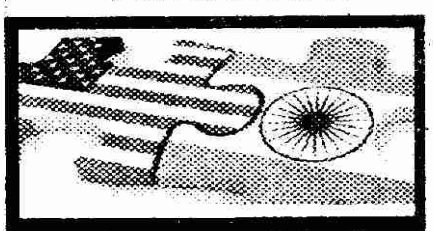

अमेरिका 500 शहरों में पानी, शौचालय और स्वास्थ्य संबंधी सुविधाएं दिलाने में 'वाश' योजना के तहत मदद करेगा

राष्ट्रीय सहारा 11.10.2014

स्वच्छ भारत मिशन : पांच अनिवार्यताएं

चुनौतियां, तो भी होंगे चार फायदे

1 खुले में शौच के चलन को कम से कम किए जाने को सर्वोच्च प्राथमिकता मिलेगी। हजारों बच्चे इस चलन के कारण हर साल काल के गाल में समा जाते हैं। जो बच रहते हैं, उनका अपेक्षित विकास नहीं हो पाता।

2 शौचालय उपयोग के लिए केंद्रीकृत पैमाना हो। किसी भी लक्ष्य को तब तक हासिल नहीं किया जा सकता जब तक कि उसका कोई पैमाना निर्धारित नहीं कर दिया गया हो। स्वच्छ भारत मिशन में शौचालय निर्माण की बजाय शौचालय उपयोग की निगरानी के मद्देनजर स्वतंत्र एवं जवाबदेह पद्धति होगी।

3 शौचालय उपयोग का लक्ष्य हासिल करने के लिए आदतों में बदलाव लाने की दरकार है। शौचालय उपयोग संबंधी जानकारी, जागरूकता और प्रोत्साहन वे बुनियादी बातें होंगी जिनके आधार पर खुले में शौच करने के चलन को खत्म किया जाएगा। अधिकारियों से नहीं पूछा जाएगा कि उनने कितने शौचालयों का निर्माण करवाया बल्कि शौचालय उपयोग के मद्देनजर लोगों की प्रवृत्ति और तौर-तरीके बदलने-न बदलने को लेकर जवाबदेह बनाया जाएगा।

4 शौचालय उपयोग के मद्देनजर जमीनी स्तर पर कार्य के लिए ब्लॉक-जिला स्तर पर ग्रामीण स्वच्छता जत्थों में शौचालय उपयोग को बढ़ावा देने और खुले में शौच की प्रवृत्ति में बदलाव की गरज से नये-समर्पित जिम्मेदार स्टाफ को शामिल करना होगा। ऐसा स्टाफ शौचालय उपयोग की प्रवृत्ति को बढ़ावा देगा। नए विचार लाने और उन्हें मूर्त रूप देने वाले अधिकारियों को पुरस्कृत किया जाएगा।

5 कार्य करते में सीखने और सबसे अच्छे अनुभव को साकार करने पर बल दिया जाएगा। सरकार शौचालय उपयोग को प्रोत्साहन, लोगों की सोच में बदलाव संबंधी प्रयासों के समक्ष चुनौतियों और सफलता-असफलताओं से सबक लेने वाले कार्यक्रम का नेतृत्व करेगी। मिशन पल्स पोलियो अभियान के अनुभवों से सीखेगी। मार्केटिंग क्षेत्र के दिग्गजों और ग्रामीण स्वच्छता संबंधी प्रवृत्तियों के जानकार विशेषज्ञों के अनुभवों का लाभ उठाएगी। (आरआईसीई)

1 मिशन लोगों के जीवन की रक्षा करेगा : बिल एंड मिलिंडा गेट्स फाउंडेशन के वॉटर सेनिटेशन एंड हाइजिन प्रोग्राम के निदेशक ब्रियान अरबोगास्ट द्वारा किए गए अध्ययन के मुताबिक, खुले में शौच करने के तौर-तरीकों के चलते अकेले भारत में ही प्रत्येक वर्ष दो लाख शिशुओं की मृत्यु हो जाती है। खुले में शौच की प्रवृत्ति के चलते जल-खाद्य पदार्थ प्रदूषित हो जाते हैं। डायरिया जैसे प्रकोप बढ़ते हैं। इतना ही नहीं छोटे बच्चों में मानसिक विकार उभर आते हैं। डॉक्टरों ने त्वचा, श्वसन, नेत्र, आंत, गुर्दे, तपेदिक, गिल्टी रोग जैसी अनेक व्याधियों की पहचान की है, जो खुले में शौच करने के चलते पांव पसारती हैं।

2 महिलाओं की सुरक्षा और साक्षरता दर में होगा सुधार : प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने जोर देकर कहा है कि सरकारी स्कूलों में लड़कियों के लिए शौचालय होना जरूरी है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय से प्राप्त आंकड़ों के मुताबिक, भारत के ग्यारह लाख स्कूलों में 10 प्रतिशत यानी लगभग 101,443 स्कूल ऐसे हैं, जहां महिलाओं के लिए शौचालयों की व्यवस्था नहीं है। नतीजतन, लड़कियों को अपनी स्कूली शिक्षा अधबीच छोड़नी पड़ती है।

महिलाओं की सुरक्षा भी चिंता का एक अन्य मुद्दा है। स्वैच्छिक संगठनों का कहना है कि बलात्कार और हत्या का शिकार बनने वाली ज्यादातर महिलाएं वे होती हैं, जो खुले में शौच के लिए जाती हैं। इनर्जी रिसोर्स इंस्टीट्यूट के सीनियर फैलो राकेश जोहरी का कहना है, 'देश में एक तिहाई महिलाओं पर खुले में शौच की विवशता के चलते बलात्कार और यौनिक हमलों की शिकार हो जाने का खतरा मंडराया रहता है।'

3 अर्थव्यवस्था का विकास होगा : 2011 की जनगणना के मुताबिक, भारत में 11.3 करोड़ ऐसे परिवार हैं, जिन्हें शौचालय की सुविधा हासिल नहीं है। साधारण से साधारण शौचालय बनवाने के लिए 15 से 20 हजार रुपए प्रति शौचालय लागत आएगी। इसमें ईंटों, सीमेंट, रेत, छत, दरवाजे, सैनिट्री साज-सामान, प्लंबिंग, सेप्टिक टैंक पर होने वाला खर्च और मजदूरी शामिल है। देश भर में 11.3 करोड़ परिवारों के लिए ऐसे शौचालयों का निर्माण करवाने के लिए 1.65 से 2.2 लाख करोड़ रुपए के बीच व्यय होगा। इस प्रकार की निर्माण गतिविधियों से रोजगार भी बढ़ेगा।

कुछ रिपोर्टों के मुताबिक, स्वच्छ भारत मिशन से सिरेमिक टाइल निर्माताओं और सैनिटरी के साज-सामान बनाने वाले विनिर्माताओं का व्यवसाय 15 प्रतिशत तक बढ़ेगा। मांग निकलने की संभावना को देखते हुए कुछ नामी कंपनियों ने अपनी यूनिटों का विस्तार करना भी शुरू कर दिया है। अनेक कंपनियों ने खुद से भी शौचालयों का निर्माण करवाने की दिशा में पहल की है। टाटा कंसल्टेंसी सर्विसेज ने देश भर में दस हजार से ज्यादा स्कूलों में शौचालय निर्माण करवाने का मंसूबा बांधा है। भारती इंटरप्राइजेज अपने 'सत्य भारती अभियान' पर 100 करोड़ रुपए का व्यय करेगी। इसके तहत लुधियाना और उसके आसपास के क्षेत्रों में आगामी तीन वर्षों के दौरान शौचालयों का निर्माण कराया जाएगा।

4 मैला ढोने की बुराई का खात्मा करेगा यह मिशन : हालांकि भारत में मनुष्यों द्वारा मल-मैला ढोने का चलन 1993 में ही प्रतिबंधित कर दिया गया था लेकिन अभी भी देश के कुछ भागों में शुष्क शौचालयों से मल ढो कर ले जाने के रूप में यह जारी है। पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय के एक वरिष्ठ अधिकारी के मुताबिक, नये शौचालय देश भर में बनवाए जाएंगे। जो मौजूदा शुष्क शौचालय हैं, ध्वस्त करवा दिए जाएंगे। चलती ट्रेनों से ट्रैक पर गिरे मल-मूत्र को साफ करवाने के लिए रेलवे सफाई कर्मियों को जुटाता है। 'राष्ट्रीय गरिमा अभियान' के एक अध्ययन से यह जानकारी मिली है। इसे देखते हुए रेल मंत्रालय और वन एवं पर्यावरण मंत्रालय अब वैकल्पिक तौर-तरीकों पर विचार करने में जुटे हैं।

राष्ट्रीय सहारा 11.10.2014

गांधी जी सोचते थे कि जाति-व्यवस्था से लड़े बगैर सफाई के काम को कलंक-मुक्त किया जा सकता है, पर हमें गांधी की इस सोच से किनारा करते हुए अंबेडकर की सीख पर चलना होगा।

असल सवाल नजरिये का है

दो अक्तूबर को राष्ट्रीय स्वच्छता अभियान शुरू हो रहा है। सो, मैंने 'रावण जी' और बेजवाड़ा विल्सन को फोन लगाया कि उनसे पूछूं, आखिर वे क्या सोचते हैं। रावण (रा'वन नहीं) जी का पूरा नाम है, दर्शन रत्न रावण। उन्होंने आदि-धर्म समाज नाम से एक सामाजिक-धार्मिक आंदोलन चलाया है। इसका उद्देश्य सफाई कामगार समुदाय की नई पीढ़ियों को मैला साफ करने जैसे अवमानना भरे काम से दूर रखना है। बेजवाड़ा विल्सन भी 'सफाई कर्मचारी' परिवार से हैं। उन्होंने सफाई कर्मचारी आंदोलन चलाया है। हाथ से मैला साफ करने जैसे अमानवीय चलन को खत्म करने में इस आंदोलन ने अग्रणी भूमिका निभाई है। बेजवाड़ा विल्सन का कहना है कि यह 'यूपीए के निर्मल भारत अभियान का ही नया संस्करण है।' यह पूरा खेल उत्पादकों (जो शौचालय बनाते हैं) और उपभोक्ताओं (जो साफ-सफाई की सुविधा का लाभ उठाते हैं) के बीच का है, इसमें 'सेवा प्रदान करने वाला' तो कहीं है ही नहीं।

योगेंद्र यादव

लेख पर अपनी राय हमें यहां भेजें
edit@amarujala.com

दर्शन रत्न रावण और बेजवाड़ा विल्सन को सरकारी स्वच्छता अभियान को लेकर जो आशंकाएं हैं, उनसे मैं पूरी तरह सहमत नहीं हूं। आंदोलनकारियों की आलोचना-बुद्धि ज्यादा प्रखर होती है। लाल किले से जब प्रधानमंत्री ने स्वच्छता अभियान और लड़कियों के लिए शौचालय बनवाने की बात कही, तो यह संदेश लोगों के दिलों को छू गया। तो फिर इस बात को लेकर रंज क्यों पालना? हर सरकारी कार्यक्रम में कुछ न कुछ तमाशे और प्रहसन के तत्व जुड़े रहते हैं। बीते हफ्ते हमने देखा ही कि दिल्ली में किस तरह से कुछ 'कूड़ा' विधिवत बिखेरा गया, ताकि मंत्री जी उसकी 'सफाई' करें। तो भी, इस अभियान के जरिये देशहित के एक महत्वपूर्ण मुद्दे पर ध्यान खींचने में मदद मिल सकती है।

असल सवाल यह नहीं कि सरकार स्वच्छ भारत अभियान को क्यों शुरू कर रही है। सवाल यह है कि स्वच्छता को लेकर सरकार का नजरिया क्या है। मेरे मित्र दर्शन रत्न रावण और बेजवाड़ा विल्सन की आपत्तियों को इसी संदर्भ में समझा जाना चाहिए। जिन लोगों ने अब

तक भारत को साफ-सुथरा रखने का बोझ अपने माथे पर ढोया है, उन्हें गरिमा भरी जिंदगी कैसे मयस्सर हो- स्वच्छता अभियान का जोर इस बात पर होना चाहिए। सफाई का सवाल चार बातों से जुड़ा है और सरकारी अभियान की गंभीरता का मूल्यांकन इन्हीं चार बातों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

शुरुआत सड़कों और सार्वजनिक स्थलों की गंदगी की सफाई से की जाए, क्योंकि यह गंदगी ऐन हमारी आंखों पर चढ़कर हमारा मजाक उड़ाती है। मगर इस मोर्चे पर आशंका प्रतीक-पूजा में फंसे रह जाने की है। सफाई का तमाशा ज्यादा देर तक टिकता नहीं और न ही उससे बहुत कुछ हासिल हो पाता है। मुख्य बात है, सफाई के काम में ज्यादा से ज्यादा लोगों को ज्यादा से ज्यादा समय तक जोड़े रखना।

दूसरी बात पर्यावरण को साफ रखने की है। किसी महानगर में घुसो, तो उसके कोने-अंतरे में ठोस कचरे के पहाड़ खड़े दिखते हैं। जलागार एकदम से सड़ांध मारते हैं। इन दो की तुलना में वायु-प्रदूषण कुछ कम नजर आता है। यदि स्वच्छता अभियान पर्यावरण प्रदूषण के सवाल से कन्नी काट ले, तो यही कहा जाएगा कि तिनके की ओट में पहाड़ छिपाने का काम किया जा रहा है। पर्यावरणीय प्रदूषण को दूर करना बड़ी चुनौती है। मसलन, क्या हम यह मान सकते हैं कि कूड़ा बीनने के काम में लगे लोग या फिर वे लोग, जिन्हें चलताऊ भाषा में कबाड़ीवाला कहते हैं, ठोस कचरे के प्रबंधन में हिस्सेदार हो सकते हैं? पर इस मोर्चे पर बड़ी बाधा निहित स्वार्थों से निपटने की है। मौजूदा सरकार ने कई सरकारों द्वारा बीते वर्षों में पर्यावरण की सुरक्षा के लिए किए गए उपायों पर पानी फेरना शुरू कर दिया है। प्रदूषण के मानकों में ढिलाई बरती गई है, प्रदूषण की निगरानी के लिए बनाए गए संस्थान कमजोर किए जा रहे हैं।

तीसरी बात, साफ-सफाई के काम की कलंक-मुक्ति की है। हम सफाई-पसंद लोग हैं, मगर खुद सफाई करने की बात पर नाक-भौंह सिकोड़ते हैं। यह राष्ट्रीय पाखंड है। गांधी जी सोचते थे कि जाति-व्यवस्था से बगैर लड़े सफाई के काम को कलंक-मुक्त किया जा सकता है, पर हमें गांधी की इस सोच से किनारा करते हुए अंबेडकर की सीख पर चलना होगा। सफाई के काम को कलंक-मुक्त करने के लिए जाति-व्यवस्था में गड़ी इसके नाभिनाल को तोड़ना होगा। इसके लिए जरूरी है कि परंपरागत तौर पर साफ-सफाई के काम में लगे जाति-समुदाय की नई पीढ़ियों को बेहतर शिक्षा और रोजगार के अवसर हासिल हों।

इसके अतिरिक्त सफाई कर्मचारियों के कामकाज की स्थितियों पर ध्यान देना राष्ट्र की प्राथमिकताओं में शामिल किया जाना चाहिए। देश भर में सफाई कर्मचारियों को ठेके या फिर अस्थायी किस्म की नौकरी पर रखने का चलन है। उन्हें मेहनताना कम मिलता है और नौकरी से जुड़ी कोई सुरक्षा हासिल नहीं रहती। सीवरों की सफाई करने वाले लोगों की दयनीय स्थिति राष्ट्रीय शर्म की बात है। काम के लिए जिस किस्म के सुरक्षा-उपकरण अग्निशामक दस्ते में शामिल लोगों को दिए जाते हैं, वैसे ही उपकरण सीवरों की सफाई करने वाले लोगों को दिए जाने चाहिए। मैला ढोने और उसे हाथ से साफ करने की प्रथा पेशतर खत्म की जानी चाहिए। क्या स्वच्छता अभियान मैला ढोने सरीखी अपमानजनक प्रथा को खत्म करने का अवसर बन सकता है?

इस सिलसिले में आखिरी बात अपने मन की सफाई की है। सच यह है कि छुआछूत अब भी हमारे दिलो-दिमाग से निकला नहीं है। छुआछूत की भावना भारत के उस हिस्से में मौजूद है, जो अपने को आधुनिक और कॉस्मोपॉलिटन कहता है। यह अभियान एक माकूल अवसर है, जब सफाई-कर्मचारी समुदाय से राष्ट्रीय स्तर पर क्षमा मांगी जाए और आगे के लिए अपने मन को साफ रखने का संकल्प लिया जाए। प्रधानमंत्री स्वयं इस मामले में हमारा नेतृत्व कर सकते हैं। लेकिन क्या वे ऐसा करेंगे?

(लेखक आम आदमी पार्टी के मुख्य प्रवक्ता हैं और फिलहाल सीएसडीएस से छुट्टी पर हैं)

अमर उजाला 02.10.2014

सर्वेक्षण

वैश्वीकरण के बाद भी छुआछूत मौजूद

अस्पृश्यता के शिकार लोगों के हाथों में ताकत देकर ही बदली जा सकती है स्थिति

हिंदुस्तानी समाज के बारे में सर्वाधिक अध्ययन जाति को लेकर हुए हैं। सामाजिक कार्यव्यापार में जाति जितनी निर्णायक भूमिका निभाती रही है उस हिसाब से यह ठीक भी है, किंतु यह भी कहना होगा कि आज तक जाति को लेकर जितनी भ्रांतियां हैं या अध्ययनों में जितनी कमियां हैं वह भी किसी और विषय को लेकर नहीं है। जाति को किसने ठीक समझा है? कौन हमारे कम्युनिस्ट भाइयों की तरह विदेशी पैमानों के चक्कर में ही उम्र गंवा चुका है और कौन जाति से ऊपर होने के नकली-असली दावे करता है, इस बारे में बहुत कुछ कहा जा सकता है।

अरविंद मोहन
सीएसडीएस के लोकनीति कार्यक्रम से जुड़े हैं
arvindmohan2000@yahoo.com

नेशनल काउंसिल ऑफ अप्लाइड इकोनॉमिक्स के भारतीय मानव विकास सर्वेक्षण का सबसे चौंकाने वाला नतीजा तो यह ही है कि छुआछूत को गैर-कानूनी घोषित हुए छह दशक से अधिक हो जाने और राष्ट्रीय आंदोलन द्वारा इसे अपने कार्यक्रम का अभिन्न हिस्सा बनाने के लगभग आठ दशक बाद भी भारतीय समाज का एक-चौथाई से ज्यादा हिस्सा आज भी छुआछूत बरतता है और कानून के होते हुए भी इस तथ्य को कबूल करता है। मात्र 5.4 फीसदी लोग ही अंतर-जाति विवाह करते हैं और दूसरा दुखद पहलू यह है कि लगभग दस साल पहले हुए सर्वे में भी अंतर-जाति विवाहों का अनुपात यही था। अर्थात सारा वैश्वीकरण सामाजिक असर के मामले में शून्य हो गया है।

सर्वेक्षण में 42,000 परिवार शामिल किए गए और इसमें अमेरिकी मेरीलैंड विश्वविद्यालय की भी भागीदारी थी। ग्रामीण समाज का लगभग हर तीसरा परिवार छुआछूत बरतते पाया गया तो शहरी भारत का हर पांचवां परिवार ऐसा कर रहा था। इसमें भी मध्यप्रदेश (50%) छत्तीसगढ़ (48%) राजस्थान और बिहार (47%) उत्तरप्रदेश (43%) और उत्तराखंड (40%) सबसे ऊपर रहे तो पश्चिम बंगाल (1%), केरल (2%), महाराष्ट्र (4%) और पूर्वोत्तर (7%) सबसे अव्वल इलाके थे। कहना न होगा कि छुआछूत को गैर-कानूनी बताने और कड़ी सजा दिलाने वाला कानून पूरे देश में लागू है, लेकिन यह अंतर-सामाजिक चेतना और आंदोलनों से आया है। जाहिर है हमारे राजनीतिक दलों और आंदोलनों के एजेंडे में अस्पृश्यता प्रमुख नहीं रह गई हो पर इस मोर्चे पर अभी भी बहुत काम करने की जरूरत है। कोई अभी के कानून को बेमानी बता सकता है पर उसे ज्यादा सख्ती से लागू किए जाने की आवश्यकता है। वह न हो तो

स्थिति बदतर होगी और उसके होने भर से ही टिकैत जैसे ताकतवर नेता को भी माफी मांगनी पड़ी थी। राजनीतिक सशक्तीकरण की प्रक्रिया भी मजबूत होनी चाहिए, क्योंकि जिन्हें छुआछूत का शिकार बनाया जाता है उनके हाथ में शक्ति होगी तो चीजें बदलेंगी ही। यहां उल्लेखनीय है कि अमेरिका में रंगभेद को कानूनी रूप से समाप्त हुए 150 साल से अधिक हो गए हैं पर हाल के एक सर्वे से जाहिर हुआ कि आज भी 56% अमेरिकी किसी न किसी रूप में रंगभेद करते हैं। यह जरूर है कि उनके भेदभाव का स्वरूप और अधिक बारीक होता है जैसे अश्वेत लड़कों के झुंड को देखकर श्वेत महिलाओं का रास्ता बदल लेना।

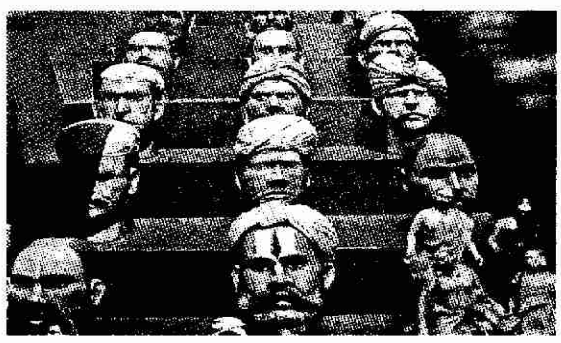

पर भारत की जाति व्यवस्था में कुछ और चीजें भी स्वतः चली आती हैं। जैसे यह सर्वे बताता है कि 30% जैन, 23 % सिख, 18 % मुसलमान, 5% ईसाई, 5 % आदिवासी और 1 % बौद्ध भी छुआछूत मानते हैं। अब जो धर्म या पंथ हिंदू समाज के जाति भेद के खिलाफ उभरे हैं या जिनमें जातिभेद न होने का दावा किया जाता है उनकी यह सच्चाई बताती है कि भेदभाव करने में हिंदू समाज अकेला नहीं है। पिछड़े मुसलमानों के सवाल को उठाने वाले सांसद अली अनवर का तो यह कहना है कि ऊंची जाति के मुसलमान अपने कब्रिस्तान में दलित मुसलमानों को दफनाने की इजाजत नहीं देते। देश का कानून भी मुसलमान और ईसाई दलितों को हिंदू दलित वाले लाभ नहीं देता जबकि सामाजिक जीवन में उन्हें वही सब भुगतना पड़ता है जो हिंदू या उससे निकले पंथों के दलितों को भुगतना पड़ता है और मुलायम सिंह जैसे नेता कुछ हिंदू अति पिछड़ों को तो दलित श्रेणी में शामिल करने की मुहिम चलाते हैं पर मुसलमान और ईसाई दलितों को लाभ देने के लिए कुछ नहीं कहते।

इस सर्वे से एक और बात बहुत मजबूती से उभरी है कि भारतीय जाति व्यवस्था के दुर्गुण (उसके कई सद्गुण भी हैं पर उनकी चर्चा प्रायः नहीं होती और अभी यहां चर्चा का कोई औचित्य नहीं है। यह व्यवस्था सिर्फ मुट्ठी भर लोगों के षड्यंत्र से टिकी नहीं रह सकती) बहुत और व्यापक हैं। इसमें इसके कष्ट भोगने वालों को उससे बेपरवाह रहने से लेकर इसकी बदमाशियों में कम-ज्यादा भागीदारी बनाना तक शामिल है। यह सर्वे बताता है कि छुआछूत मानने वालों में अगर 52% ब्राह्मण हैं तो उनके बाद का नंबर ओबीसी जातियों (33%) का है। गैर-ब्राह्मण अगड़ों में यह प्रतिशत 24 ही है तो आदिवासियों में यह 23 फीसदी है और अपमानित होने वाले 15 फीसदी दलित खुद भी छुआछूत बरतते हैं।

अब कई लोग इसे सर्वे का दोष बता सकते हैं पर यह जाति-व्यवस्था के कामकाज की झांकी है, जिसमें ऊंच-नीच के बंटवारे का कोई अंत नहीं है जैसे कभी दो बैल से कोल्हू चलाकर तेल निकालने वाले दोबैलिया तेली खुद को एकबैलिया तेली से श्रेष्ठ मानते हैं और शादी-ब्याह में परहेज करते हैं। एक ही जाति और उप-समूह के अलग-अलग गांव में रहने वालों में भी ऊंच-नीच होता है। यह फासला दहेज से लेकर अच्छा लड़का-लड़की तक जैसे किन कारणों से और कैसे बढ़ता है यह दिलचस्प आख्यान है। सर्वेक्षकों का कहना है कि उन्होंने ऐसे भेदभाव को नजर अंदाज किया है और मोटा हिसाब ही रखा है।

जाहिर तौर पर यह सर्वे हमारे समाज के कार्य-व्यापार पर एक गंभीर टिप्पणी है। जब महात्मा गांधी छुआछूत और भेदभाव के सबसे प्रकट और मजबूत रूप को दलितों के मंदिर प्रवेश आंदोलन के जरिये चुनौती दे रहे थे तब पूरे देश में उन्हें देवघर, बनारस और पुणे जैसे ठिकानों पर ही विरोध झेलना पड़ा था। गांधी ने अपनी राजनीतिक-सामाजिक शक्ति के साथ हिंदू धर्मग्रंथों की ताकत का भी अपने पक्ष में इस्तेमाल किया और इस पढ़ाई में तब के अनेक नामी पंडितों ने उनकी मदद की थी। तब बाकी भारतीय और खासकर हिंदू समाज का व्यवहार ऐसा था मानो उनके सीने से कोई बोझ उतर रहा हो पर गांधी का आंदोलन, फुले का आंदोलन व नारायण गुरु का आंदोलन खत्म होते ही पुरानी व्यवस्था हावी होती गई।

छुआछूत को लेकर भारतीय समाज पहले भी अनेक धार्मिक और पंथिक आंदोलन कर चुका था, भक्ति आंदोलन भी उसी का परिणाम था पर यह भी हुआ है कि जाति व्यवस्था ने भगवान बुद्ध से लेकर बाबा साहब तक सबको उलझाया। शंकराचार्य जगत को मिथ्या बताकर इससे किनारा कर गए। राममनोहर लोहिया का तो मानना था कि पहली बार विवेकानंद को दर्शन की ऊंची-ऊंची बातों और समाज के व्यवहार में फर्क दिखा और उन्होंने नई पहल की जिसे गांधी और आंबेडकर जैसों महापुरुषों ने नई ऊंचाई दी। जाहिर है हमें अभी भी अनेक विवेकानंदों, गांधी, लोहियाओं और आंबेडकरों की जरूरत है।

दैनिक भास्कर 03.12.2014

राशन दुकानों पर पहली तारीख से मिलेगा राशन

नई दिल्ली (एसएनबी)। राजधानी में सरकारी उचित दर की राशन दुकानों पर अब खाद्य निरीक्षकों की मनमानी नहीं चलेगी और माह के पहले दिन से ही राशन की बिक्री शुरू हो जाएगी। खाद्य एवं आपूर्ति विभाग ने प्रत्येक माह खाद्य निरीक्षकों द्वारा ही राशन बिक्री करने की शुरुआत करने की प्राणाली को खत्म कर नई प्राणाली को लागू किया है। इसके तहत राशन कार्ड धारक माह के पहले दिन से पूरे माह के दौरान किसी भी दिन दुकान से राशन प्राप्त कर सकेंगे। इस प्राणाली से राशन उपभोक्ताओं के साथ-साथ राशन दुकानदारों को भी बड़ी राहत मिली है।

बता दें कि राजधानी में सरकारी राशन की दुकानों पर पुरानी व्यवस्था के तहत राशन दुकानों में राशन आने के उपरांत खाद्य आपूर्ति अधिकारी को इसकी सूचना देनी होती थी, इसके पश्चात खाद्य आपूर्ति अधिकारी द्वारा एक निरीक्षक को राशन की मात्रा, आपूर्ति आदि की जांच हेतु नियुक्त किया जाता था। निरीक्षण के उपरांत निरीक्षक राशन दुकान को खोलने एवं आपूर्ति प्रारंभ करने का आदेश देता था। इस दौरान राशन कार्डधारियों को दुकान खोलने एवं राशन बिक्री से संबद्ध निरीक्षक के आदेश का इंतजार करना पड़ता था। इस प्रणाली की वजह से कार्ड धारियों को राशन दुकान के कई चक्कर लगाने पड़ते थे साथ ही भ्रष्टाचार की शिकायतें भी आती थीं।

खाद्य एवं आपूर्ति आयुक्त सज्जन सिंह यादव ने बताया कि उपभोक्ताओं एवं राशन दुकानदारों की इस समस्या को देखते हुए खाद्य आपूर्ति निरीक्षक एवं अधिकारी द्वारा बिक्री की शुरुआत की प्रणाली को खत्म करने संबंधी आदेश जारी किए गए हैं। विभाग द्वारा यह सुनिश्चित किया जाएगा कि प्रत्येक माह का राशन महीने की शुरुआत से पहले राशन दुकान तक पहुंच जाए। साथ ही प्रत्येक माह के प्रथम दिन पर सभी राशन दुकान पर राशन की बिक्री शुरू हो जाए। उन्होंने कहा कि यदि माह की शुरुआत से पहले राशन दुकान तक राशन नहीं पहुंचता है तो दुकान पर राशन की प्राप्ति के 48 घंटे के बाद बिक्री को खुला समझा जाएगा।

- खाद्य एवं आपूर्ति विभाग ने सरकारी दुकानों पर राशन बिक्री की नई प्रणाली लागू की
- राशन कार्ड धारक माह में किसी भी दिन ले सकेंगे राशन
- खाद्य निरीक्षकों की मनमानी होगी खत्म

उन्होंने बताया कि राशन कार्ड धारक महीने के किसी भी दिन सुबह नौ बजे से दोपहर एक बजे और तीन बजे से सात बजे के दौरान अपना राशन प्राप्त कर सकते हैं। इस प्राणाली में लाइसेंसधारीदुकानदारों के लिए खाद्य आपूर्ति अधिकारी कार्यालय को सूचित करने और निरीक्षक द्वारा दुकान का दौरा करने एवं बिक्री को खोलने के लिए किसी आदेश की आवश्यकता अब नहीं है।

उन्होंने बताया कि राशन के विपणन और कालाबाजारी को रोकने के लिए विभाग के सभी खाद्य आपूर्ति अधिकारियों और निरीक्षकों को सतर्क रहने को कहा गया है। उन्होंने बताया कि सरकारी राशन की दुकान पर राशन कब पहुंचा इसकी निगरानी विभाग के पोर्टल पर की जा सकती है। अधिकारियों को भी निर्देश दिए गए हैं कि गोदाम से दुकानों के लिए शुरू होने वाली ढुलाई पर वह नजर रखें।

अब महिला समूहों को मिलेगी राशन दुकानों के आवंटन में प्राथमिकता

नई दिल्ली (एसएनबी)। दिल्ली सरकार का खाद्य एवं आपूर्ति विभाग राशन की उचित दर की दुकानों के आवंटन में अब महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों को प्राथमिकता देगा, ताकि महिलाओं को अधिक से अधिक रोजगार के अवसर मिल सकें। ऐसे महिला समूह मिशन कन्वर्जन्स से पहले से ही पंजीकृत हैं। खाद्य विभाग ने दावा किया है कि खाद्य सुरक्षा अधिनियम दिल्ली में सबसे पहले लागू होने के बाद 15 लाख 82 हजार परिवारों को राशनकार्ड जारी किए जा चुके हैं। इनके जरिए 58 लाख लोगों को राशन दिया जा रहा है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली में पारदर्शिता लाने के लिए विभाग ने एक पोर्टल भी शुरू किया है, जिसके जरिए न सिर्फ राशन संबंधी सभी जानकारियां घर बैठे मिल सकेंगी, बल्कि आवेदन के लिए भी इधर-उधर नहीं भटकना पड़ेगा।

खाद्य एवं आपूर्ति विभाग के सचिव एवं आयुक्त एसएस यादव ने मंगलवार को आयोजित संवाददाता सम्मेलन में उक्त जानकारी दी। इस मौके पर विशेष खाद्य आयुक्त बीआर सिंह और एएन तालवंडे भी मौजूद थे। यादव ने राशन उपभोक्ताओं के लिए नए पोर्टल की शुरुआत की घोषणा करते हुए बताया कि अब राजधानी में एक भी फर्जी राशनकार्ड नहीं है। दिल्ली में सबसे पहले खाद्य सुरक्षा अधिनियम लागू किया था। इसके तहत 20 लाख आवेदन आए थे। इनमें 19 लाख आवेदनों की जांच पड़ताल की जा चुकी है। करीब चार से पांच लाख आवेदन रद्द भी हुए हैं। वर्तमान में 16 लाख 82 हजार राशनकार्ड के जरिए 58 लाख लोगों को राशन दिया जा रहा है। पहले की व्यवस्था में 96 लाख लोग इसका लाभ लेते थे।

- खाद्य विभाग का दावा अब एक भी फर्जी राशनकार्ड नहीं
- सार्वजनिक वितरण प्रणाली हुई ऑनलाइन
- राशनकार्ड के आवेदन से लेकर दुकान में राशन की उपलब्धता तक की जानकारी मिलेगी पोर्टल से

यादव ने बताया कि विभाग ने वेब पोर्टल डब्ल्यूडब्ल्यूडब्ल्यू डॉट एनएफएस डॉट दिल्ली डॉट जीओवी डॉट इन पर सभी जानकारियां उपलब्ध करा दी हैं। इनके अलावा वाट्सएप और फेसबुक के जरिए भी उपभोक्ता कोई भी जानकारी हासिल कर सकते हैं। वाट्सएप के लिए पिछले महीने एक मोबाइल नंबर 8800950480 जारी किया गया था। राशन लाने-ले जाने वाले वाहनों में जीपीएस लगाया गया है, ताकि उनका ट्रैक रखा जा सके। खाद्य आयुक्त ने बताया कि जो राशनकार्ड जारी किए गए हैं, उनमें 97.06 फीसद कार्ड महिलाओं के नाम से ही हैं, क्योंकि यह तय किया गया था कि राशनकार्ड घर की सबसे बड़ी महिला के नाम से ही जारी किया जाएगा। नई राशन दुकानों के आवंटन में महिलाओं को प्राथमिकता दी जाएगी। इसके लिए 20 आवेदन भी उनके पास आ चुके हैं।

राष्ट्रीय सहारा 17.12.2014

मौजूदा राशन कार्ड से देश भर में कहीं भी खरीद सकेंगे राशन

राशन कार्ड को आधार कार्ड से जोड़ने की तैयारी

संतोष ठाकुर | नई दिल्ली

आने वाले दिनों में शहर बदलने पर नया राशन कार्ड बनवाने या एलपीजी कनेक्शन को ट्रांसफर कराने की जरूरत नहीं पड़ेगी। एक शहर का उपभोक्ता अपने राशन कार्ड से देश में कहीं भी राशन खरीद पाएगा। सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय की सलाह पर उपभोक्ता मामलों का मंत्रालय और पेट्रोलियम मंत्रालय नई योजना का खाका तैयार कर रहे हैं।

सूचना प्रौद्योगिकी सचिव आरएस शर्मा के मुताबिक इस योजना के तहत राशन कार्ड को आधार से जोड़ने की योजना है। आधार नंबर से यह पुख्ता होगा कि सही व्यक्ति ने ही राशन या एलपीजी लिया है। तय दुकान पर राशन न मिलने की दशा में लोग नजदीकी राशन की दुकान से राशन खरीद पाएंगे। दूसरे शहर में जाने पर भी राशन लेने में दिक्कत नहीं होगी। राशन का सारा ब्यौरा ऑनलाइन होगा। राशन नहीं देने वाले दुकानदारों की पहचान हो पाएगी। सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) में होने वाली गड़बड़ियों को रोका जा सकेगा। घरेलू गैस सिलेंडर को भी इस योजना के दायरे में लाने की तैयारी है। इसके बाद ग्राहक को शहर बदलने पर गैस कनेक्शन ट्रांसफर कराने के झंझट से मुक्ति मिल जाएगी। हालांकि अभी सभी उपभोक्ताओं के पास आधार कार्ड नहीं है। लिहाजा एलपीजी के मामले में यह योजना लागू करने में ज्यादा वक्त लगने की योजना है।

दैनिक भास्कर 26.12.2014

बर्ड के बदले ले सकेंगे छोटू सिलेंडर

पांच किलो के छोटू सिलेंडर को अब डिस्ट्रीब्यूटर के माध्यम से भी बेचा जाएगा। अभी तक यह सिलेंडर केवल पेट्रोल पंप पर ही बिकता है। अगर कोई उपभोक्ता 14.2 किलो का बड़ा सिलेंडर नहीं लेना चाहता है तो वह साल में 36 छोटू सिलेंडर ले सकेगा। ऐसे मामलों में बाजार भाव पर मिलने वाला छोटू सिलेंडर रियायती दर पर उपलब्ध होगा। रिफिल चार्ज 155 रुपए देना होगा।

विस्तृत पेज 3

योजना आयोग की जगह बनेगा नीति आयोग

नई दिल्ली (एसएनबी)। योजना आयोग समाप्त कर उसकी जगह नई संस्था बनाने की स्थिति अब करीब-करीब साफ होने लगी है। हालांकि जितना प्रचारित किया जा रहा है उतनी नहीं। योजना आयोग का नाम बदलकर नीति आयोग हो जाएगा। नीति का अर्थ भी योजना ही होता है।

नीति आयोग के गठन पर मुख्यमंत्रियों की सलाह लेने के लिए प्रधानमंत्री ने 7 दिसम्बर को बैठक बुलाई है। इस बैठक में मुख्यसचिवों को भी बुलाया गया है। आधार संख्या बनाने वाली संस्था विशिष्ट पहचान संख्या प्राधिकरण और डीबीटी यानी डायरेक्ट बेनेफिट योजना नए नीति आयोग के तहत होगी। पहले भी योजना आयोग इन कामों को देख रहा था, लेकिन योजना आयोग को खत्म करने की प्रधानमंत्री की घोषणा के बाद से यह काम वित्त मंत्रालय देख रहा था।

मोटे तौर पर नई संस्था में आठ सदस्य हो सकते हैं। मुख्यमंत्रियों को पदेन सदस्य बनाया जाएगा और हरेक क्षेत्र के विशेषज्ञों की टीम तैयार की जाएगी। नई संस्था में मुख्यतः सरकार के प्रस्तावों को कसौटी पर परखा जाएगा। परियोजनाओं की फीजिब्लिटी व उसके नफा-नुकसान आदि का अध्ययन करने के बाद प्रस्ताव वापस पीएमओ को भेजे जाएंगे जो उन्हें कैबिनेट की मंजूरी के लिए भेजेगा। सूत्रों का कहना है कि राष्ट्रीय विकास परिषद की तरह ही नई संस्था की बैठक साल में कम से कम एक बार होगी। बाकी समय विशेषज्ञ अपना काम करते रहेंगे।

- 7 दिसम्बर को प्रधानमंत्री ने बुलाई मुख्यमंत्रियों की बैठक
- नई संस्था में आठ सदस्य हो सकते हैं
- मुख्यमंत्रियों को पदेन सदस्य बनाया जाएगा और हर एक क्षेत्र के विशेषज्ञों की टीम तैयार की जाएगी

दरअसल प्रधानमंत्री इस बात का भी ध्यान रख रहे हैं कि पुराने योजना आयोग की तरह नई संस्था न बने जिससे राज्यों के अधिकारों में कटौती हो या राज्यों पर केंद्र की मंशा थोपी जाए। वह राज्यों को पूरी तरह से आजादी देने के पक्ष में है। केंद्रीय प्रायोजित योजनाएं भी वही चलेंगी जिन पर राज्य सरकारें सहमत होंगी।

राष्ट्रीय सहारा 01.12.2014

जनवरी से सीधे बैंक खाते में जाएगी एलपीजी सब्सिडी

नई दिल्ली (भाषा)। नए साल की शुरुआत से देश भर में एलपीजी ग्राहकों को नकद सब्सिडी उनके बैंक खातों में मिलेगी ताकि वे रसोई गैस सिलेंडर बाजार भाव पर खरीद सकें।

पेट्रोलियम मंत्री धर्मेन्द्र प्रधान ने एलपीजी के लिए प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (डीबीटी) योजना शुरू करने की तैयारी की समीक्षा की। उन्होंने ग्राहकों को होने वाली समस्या का जायजा लेने के लिए स्वयं एक परेशान ग्राहक को कॉल किया और उसकी समस्या को जाना। एलपीजी सब्सिडी प्रत्यक्ष नकद अंतरण योजना का नाम 'पहल' रखा गया है।

पूर्व संप्रग सरकार ने जून 2013 में इस योजना की शुरुआत की लेकिन अदालती आदेशों के मद्देनजर इसे एकाएक रोक दिया गया। इस महत्वकांक्षी योजना में नकद सब्सिडी के लिए विशिष्ट पहचान संख्या (आधार) की जरूरत को हटाने के लिए इसे संशोधित किया गया। योजना को 15 नवम्बर से 54 जिलों में शुरू किया गया और एक जनवरी 2015 से इसे देश भर में शुरू किया जाएगा।

धर्मेन्द्र प्रधान ने कहा कि 'पहल' या प्रत्यक्ष हस्तांरित लाभ एक जनवरी से सभी जिलों में लागू किया जाएगा। योजना के तहत एलपीजी ग्राहकों को नकद सब्सिडी उनके बैंक खातों में डाली जाएगी, इसके बाद वह रसोई गैस सिलेंडर बाजार मूल्य पर खरीद सकेंगे। योजना से जुड़ने के बाद जैसे ही ग्राहक पहली बुकिंग कराएगा, उसके बैंक खाते में नकद राशि हस्तांतरित कर दी जाएगी। राशि बाजार भाव तथा सब्सिडीयुक्त दर का अंतर है। जैसे ही ग्राहक को सिलेंडर की डिलीवरी होती है, अग्रिम नकद सब्सिडी उसके खाते में डाल दी जाएगी। डीबीटी का मकसद यह सुनिश्चित करना है कि सब्सिडी का लाभ सही लोगो को मिले। सरकार को सब्सिडी का दुरुपयोग रोककर 10,000 करोड़ रुपए की बचत की उम्मीद है।

बालिकाओं के लिए 'सुकन्या समृद्धि खाता' शुरू

नई दिल्ली (भाषा)। छोटी बचतों को प्रोत्साहन देने के लिए सरकार ने बालिकाओं के लिए विशेष जमा योजना 'सुकन्या समृद्धि खाता' शुरू की है। यह खाता बैंक व डाकघरों में खोला जा सकता है। इसमें से आधी राशि बालिका की उच्च शिक्षा व शादी के लिए निकाली जा सकती है।

सरकार ने इस योजना को अधिसूचित कर दिया है। लेकिन योजना पर मिलने वाली विशेष ब्याज दर पर फैसला बाद में किया जाएगा। योजना के तहत 10 साल की उम्र की बालिका के नाम पर खाता खोला जा सकता है। यह योजना खाते खोलने की तारीख से 21 साल में परिपक्व होगी और इस पर जमा 14 साल पूरे होने तक करनी होगी। जहां यह खाता है, यदि बालिका वहां से कहीं और स्थानांतरित होती है, तो इसे देश में कहीं भी स्थानांतरित किया जा सकता है। अधिसूचना में कहा गया है कि बालिका के 18 साल का होने के बाद 50 प्रतिशत जमा राशि उसकी उच्च शिक्षा या विवाह के लिए निकाली जा सकती है। यह खाता बालिका के अभिभावकों द्वारा खोला या संचालित किया जाएगा। वे बालिका के दस साल का होने तक खाते का परिचालन करेंगे। 10 साल की आयु पूरी होने के बाद बालिका खुद खाते का परिचालन कर सकेगी। खाताधारक की मृत्यु होने पर इसे तत्काल बंद कर दिया जाएगा और खाते में रखी राशि का खाता बंद होने के पिछले महीने तक के ब्याज के साथ भुगतान कर दिया जाएगा। इस योजना का मकसद छोटी बचत जुटाना तथा उनका बुनियादी ढांचे के विकास में इस्तेमाल करन है। सरकार ने हाल ही में किसान विकास पत्र को फिर से शुरू किया है।

- बैंक व डाकघरों में खुलेगा खाता, उच्च शिक्षा व शादी के लिए निकाली जा सकेगी खाते से रकम
- खाते में 14 साल तक जमा करना होगा पैसा, मैच्योरिटी 21 साल में

राष्ट्रीय सहारा 05.12.2014

देखी सुनी – मुख्य हिंदी समाचार पत्रों में छपने वाले महिला मुद्दों से सम्बन्धित खबरो व लेखो का त्रैमासिक संकलन है। संकलित लेखों में व्यस्त विचार लेखकों के निजी विचार है, ज़रुरी नही यह हमारी संस्थागत सोच व क्रियांवयन को दर्षाते हो।

Bread for the World, Misereor के सहयोग से प्रकाशित

निशुल्क प्रतियों के लिए संपर्क करें–
जागोरी, बी–114, शिवालीक, मालवीय नगर, नई दिल्ली–110017,
फ़ोनः 011–26691219, 26691220
email: resource@jagori.org/jagori@jagori.org,www.jagori.org